Nāsiketopākhyān

Nagari Pracharini Sabha Granthmala Series—No. 2.

सदलमिश्र अनुवादित

चन्द्रावती

अथवा

नासिकेतोपाख्यान

जिसे

श्यामसुन्दरदास, बी. ए.

ने

सम्पादित किया

और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने

प्रकाशित किया

१९०१

PRINTED AT THE INDIAN PRESS, ALLAHABAD.

Price As. 5.] [मूल्य ।-)

चन्द्रावती

अथवा

नासिकेतोपाख्यान

सकल सिद्धिदायक वो देवतन में नायक गणपति को प्रणाम करता हूं कि जिनके चरण कमल के स्मरण किए से विघ्न दूर होता है औ दिन दिन हिय में सुमति उपजती वो संसार में लोग अच्छा अच्छा भोग बिलास कर सबसे धन्य धन्य कहा अन्त में परम-पद को पहुंचते हैं कि जहां इन्द्र आदि देवता सब भी जाने को ललचाते रहते हैं।

दोहा

गणपति चरण सरोज द्वौ, सकल सिद्धि की राश।
बन्दन करि सब होत है, पूरण मन की आश॥

चित्र विचित्र सुन्दर सुन्दर बड़ी बड़ी अटारिन से इन्द्रपुरी समान शोभायमान, नगर कलिकत्ता महा प्रतापी बीर नृपति कम्पनी महाराज के सदा फूला फला रहे, कि जहां उत्तम उत्तम लोग बसते हैं औ देश देश से एक से एक गुणी जन आय आय अपने अपने गुण को सुफल करि बहुत आनन्द में मगन होते हैं।

नाम सुन सदलमिश्र पण्डित भी वहां आन पहुंचा वो बड़ी बड़ाई सुनि सर्वविद्या-निधान ज्ञानवान महा-प्रधान श्री महाराज जान गिलक्रस्त साहब से मिला कि जो पाठशाला के आचार्य्य हैं। आज्ञा पाय दो एक ग्रन्थ संस्कृत से भाषा वो भाषा से किए।

अब संवत् १८६० में नासिकेतोपाख्यान को कि, जिसमें चन्द्रावती की कथा कही है, देववाणी से कोई कोई समझ नहीं सकता, इसलिये खड़ी बोली में किया। तहां कथा का आरम्भ इस रीति से हुआ—

एक समय राजा जनमेजय गङ्गा के तीर पर बारह बरस यज्ञ करने को रहे। एक दिन स्नान पूजा करि ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे देवता पितरों को तृप्त करके ऋषि और पण्डितों को साथ लिए वैशम्पायन मुनि के पास जा, दण्डवत कर, खड़े हो, हाथ जोड़, कहने लगे कि "महाराज! आप वेद पुराण सब शास्त्र के सार जाननिहार, तिसपर व्यास मुनि के शिष्य, सब योगियों में इन्द्र समान हो। ऐसी कथा, कि जिसके सुनने से पाप कटे और कोई रोग न होय, भर जन्म संसार में अच्छा भोग, अन्त में मुक्ति मिले, हमसे कहिए।"

प्रसन्न होकर वह बोले कि "हे राजा! तुम बड़े ज्ञानी हो। अच्छा, सब पाप दूर करनेवाली पुराण की कथा कि जिसके सुनने से निस्सन्देह मुक्ति होती है, मैं कहता हूं, तुम ऋषि वो सेवकों के समेत सावधान होकर सुनो—

किसी समय में ब्रह्मा के पुत्र ऐसे उद्दालक मुनि भए कि जिनके दर्शन से लोग पवित्र होते थे। वेद पुराण श्रुति स्मृति में बहुत निपुण, और दाता दयालु कहिए तो वैसेही, बड़े समर्थ, सब मुनियों में श्रेष्ठ, कि जिनका तपस्याही धन था, उनके सुहावने आश्रम पर कि जिसको बड़े बड़े मुनि लोग नित्य आय सेवैं और जहां नाना प्रकार के वृक्षों पर लता सब छा रही थीं—पिप्पलाद मुनि आन पहुंचे।

देखते ही उद्दालक ऋषि उठ खड़े भए। सिर नवा, प्रणाम वो जैसा कुछ चाहिए वैसा आदर भाव कर, आसन दे बैठाया। प्रीति से हाथ पांव धोला, कुशल क्षेम वो उनके वहां आवने का कारण पूछा।

वह बोले कि हम तुम्हारी बड़ी तपस्या इस बन
आए, तैसे ही तुमको देख बहुत प्रसन्न हुए। पर बिना
तपस्या अकारथ होती है, क्योंकि स्त्री के साथ तप कर
सब सिद्धि को पहुंचे। और वेद की आज्ञा से सन्तान के
पत्नी सों भोग करना उचित है, नहीं तो विस बिन क्या कथा क्रिया सिद्ध होती है। और पुत्रहीन के, देवता वो पितर इन दोनों में कोई सन्तुष्ट नहीं। जग में विसके देव पितर बहुत

गवर्नमेण्ट को लिखा और हस्तलिखित जितनी पुस्तकें उस समय वहां वर्तमान थीं, सब उनको मिल गईं। कुछ दिन पीछे कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स ने उन उन पुस्तकों को इङ्गलैण्ड मंगा लिया जिनकी दो प्रतियां वर्तमान थीं। वहां जो पुस्तकें गईं, सम्भव है कि उनमें सदल मिश्र का भी कोई और ग्रन्थ हो। पर इस समय सेक्रेटरी आफ़ स्टेट के पुस्तकालय के, तथा रायल एशियाटिक सुसाइटी के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची ठीक नहीं है। यह पता ठीक नहीं लगता है कि कौन कौन ग्रन्थ हिन्दी, संस्कृत, फ़ारसी, तथा अर्बी के हैं। इस अवस्था में सदल मिश्र के विषय में कुछ विशेष पता नहीं लग सकता। इस समय बोर्ड आफ एक्ज़्यामिनर्स के पास भी जो फोर्ट विलियम कालेज सम्बन्धी कागज हैं, उनमें भी सदलमिश्र का कोई पता नहीं है।

यह ग्रन्थ जो संस्कृत के प्रसिद्ध नासिकेतोपाख्यान का अनुवाद है, योग शास्त्र और विद्या का महत्व दिखाने के लिये लिखा गया था। योग जैसे अद्भुत और परम आश्चर्यमय शास्त्र का उद्देश्य तो कुछ लोग यही लगाते हैं कि मानवी शरीरस्थ आत्मा ईश्वर की आत्मा में मिलकर एक हो जाय। पर वास्तव में महर्षि कपिल और पातञ्जल के योगसूत्रों का अभिप्राय यह नहीं जान पड़ता। आत्मा तो स्वयम् ब्रह्म का अंश है, यद्यपि उसे यह ज्ञात न हो। अतएव उसका कर्तव्य यह है कि इस अज्ञान को दूर कर ब्रह्मत्व को सदा प्राप्त रहे। अतएव युज् धातु का अर्थ जुड़ना, लगना न होकर उद्यत होना है, और महर्षि पातञ्जलि के प्रथम अध्याय के दूसरे ही सूत्र में लिखा है कि योग चित्तवृत्ति का निरोध है। जब तक यह न होगा तब तक योग का ज्ञान अथवा उसकी प्राप्ति नहीं हो सकती। वास्तव में योग के अर्थ वियोग, विवेक अर्थात् पुरुष और प्रकृति में विभेद के हैं। इसके होने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। योग करने से मनुष्य में अनेक अद्भुत शक्तियों का आविर्भाव हो जाता है जिनसे वह प्रकृति के नियमों को भङ्ग कर अपने इच्छानुकूल कार्य्य कर सकता है। इस शास्त्र के महत्व को दिखाने के लिये इस नासिकेतोपाख्यान की रचना की गई जान पड़ती है, पर आश्चर्य है कि जिसका महत्व इसमें

वर्णन है, उसीके सिद्धान्तों के विरुद्ध इसमें बहुत सी बातें लिखी हैं। प्रत्येक सत्कर्म का अन्तिम परिणाम स्वर्ग में अप्सराओं से स्वच्छन्द भोग विलास है। यदि सत्कर्म और पुण्य करके भी मनुष्य के हृदय में इन्हीं भोग विलासों की कामना बनी रहे, तो स्वर्ग की कामना करनी व्यर्थ है। इस संसार में मनुष्य इच्छानुकूल भोग विलास कर सकता है। इसी नासिकेत के सदेह यमलोक जाने की कथा कठोपनिषद् में भी दी है, पर उसमें इन भोग विलासों का लालच नहीं दिखाया गया, उसमें जन्ममरण के सिद्धान्तों का वर्णन योग्य, उपयुक्त और दार्शनिक रीति से किया गया है। इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है कि यह नासिकेतोपाख्यान की कथा भूले भटके हुए लोगों को सन्मार्ग पर लाने के लिये लिखी गई है। नरक और स्वर्ग वास्तव में कोई स्थान हैं और उनमें वही बातें हैं जिनका वर्णन इस उपाख्यान में है, इस बात को दृढ़ता से कौन कह सकता है? दर्शनशास्त्रज्ञ ऋषियों का ही इस विषय में भिन्न भिन्न मत है; अतएव हम इस विषय में कुछ नहीं लिखा चाहते।

यह पुस्तक इस लिये ही केवल प्रकाशित की जाती है कि इसकी भाषा प्रारम्भकाल के गद्य की है; और कोई विशेषता ऐसी नहीं है कि जिससे यह ग्रन्थ प्रकाशित किया जाता। जहां जहां इस ग्रन्थ का अंश खण्डित हुआ सा जान पड़ता था० वहां वहां अपनी ओर से जो शब्द जोड़ दिए गए हैं वे [ ] इस प्रकार के कोष्ठ में रक्खे गए हैं।

लहोरी टोला,
काशी, २५ अगस्त १९०१ } श्यामसुन्दर दास।

भूमिका

हिन्दी साहित्य का इतिहास उसके केवल अर्द्धाङ्ग मात्र का इतिहास है, अर्थात् प्रारम्भ से लेकर उन्नीसवीं-शताब्दी के प्रारम्भ तक प्रायः सब अच्छे अच्छे ग्रन्थ पद्य में मिलते हैं। गद्य के साहित्य सम्बन्धी कोई भी ग्रन्थ देखने में नहीं आते; हां, कहीं कहीं वैद्यक आदि ग्रन्थों के अनुवाद व्रजभाषा में मिलते हैं। सारांश यह कि हिन्दी के इतिहास में उसके पद्यभागही ने वास्तविक रूप धारण करके कुछ उन्नति की, गद्य-का तो कहीं नाम न रहा। यह अवस्था १८०० ई० के लगभग तक रही। इन्हीं दिनों में कलकत्ते के फ़ोर्ट विलियम कालेज में पण्डित लल्लू जी लाल नौकर हुए और उन्होंने एक नई भाषा की उत्पत्ति की। यद्यपि भाषाओं में परिवर्तन सब देशों में होता आया है, परन्तु यह रचना सबसे विचित्र हुई। एक नई भाषाही बन गई और क्रमशः उसने एक बड़े अभाव की पूर्ति कर भारतवासियों की "मातृभाषा" का स्थान ग्रहण किया। तब तक उर्दू का प्रचार था। अब से हिन्दी और उर्दू में भेद होगया और यद्यपि शब्दावली दोनों की अधिकांश मिलती हैं, परन्तु पदों की बनावट में स्पष्ट भेद पड़ गया। इस भेद को डाक्टर ग्रियर्सन साहब बहुत स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं–"When the Premasagar was written, Hindus discovered that they had been speaking prose all their life without knowing it. Hence Hindi prose follows the order of Hindu speech, and this order is fixed on the most rigid lines. The subject *must* precede the predicate, the governed word *must* precede the governing (*uske bad*,—never *bad uske*; which is Urdu); the adjective *must* precede the substantive with which it agrees and, most fixed of all, the verb *must* be the last word in the sentence. If these rules are broken, a Hindu says that the sen-

tence ceases to be Hindi, it has got Persian infection and has become Muhammadan. It is Urdu, though it may not contain a single Arabic or Persian word–(Lalchandrika, Intro. P. 13, 1896).

इस प्रकार परिवर्तन होते होते भाषा के अब ऐसे कठिन नियम बन गए हैं।

अस्तु इस हिन्दी गद्य के जन्मदाता लल्लू जी लाल माने जाते हैं। उन्होंने १८०० ई० में कई ग्रन्थ इस नवजनित भाषा में लिख डाले थे, जैसा कि उन्होंने अपनी जीवनी में स्वयं लिखा है। चन्द्रावती उपाख्यान के अनुवादकर्ता पण्डित सदल मिश्र ने १८०३ ईसवी में यह ग्रन्थ लिखा है, परन्तु वे अपनी भूमिका में लिखते हैं कि उन्होंने इस ग्रन्थ को लिखने के पहिले कई संस्कृत ग्रन्थों का भाषा में अनुवाद किया। पर उनमें से एक का भी नाम उन्होंने नहीं लिखा है, इसलिये उनके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। परन्तु एक बात निश्चित है कि लल्लू जी लाल और सदल मिश्र दोनों समकालीन और एक स्थान में नौकर थे और दोनों ने १८०० के लगभग निजजनित गद्य में ग्रन्थ लिखे, और दोनों की भाषा भी एकसी है। इस अवस्था में वास्तव में कौन हिन्दी गद्य का जन्मदाता है यह निश्चित रुप से नहीं कहा जा सकता। सम्भव है कि दोनों ने मिलकर इस काम को किया हो और पण्डित सदल मिश्र के ग्रन्थों के लुप्त अथवा नष्ट हो जाने से उनका नाम भी लोग भूल गए हों, और केवल लल्लू जी लाल ही का नाम प्रसिद्ध हो गया हो।

चन्द्रावती उपाख्यान की हस्तलिखित प्रति पहिले फोर्ट विलियम कालिज में थी, पर अब एशियाटिक सुसाइटी में है यद्यपि उसपर मोहर अब तक फोर्ट विलियम कालेज की है। केवल यही नहीं, वरन् बहुत से ग्रन्थ फोर्ट विलियम कालेज के एशियाटिक सुसाइटी में इस समय वर्तमान हैं। सन् १८३६ ईसवी में फोर्ट विलियम कालेज तोड़ दिया गया और उसके पुस्तकालय का कुछ अंश कलकत्ता पबलिक लाइब्रेरी को दे दिया गया। इस समाचार के विदित होते ही एशियाटिक सुसाइटी ने

आनन्द होते कि जिसको कुल उपजानेवाला पुत्र होता है। वो निपुत्री को घर में क्या सुख कि जिस बिना वह सदा अन्धकार रहता है।

इसलिये हमारी आज्ञा से और सब ऋषियों के सम्मति से किसी से कन्या याचकर अपना बंश उत्पन्न करो, नहीं तो यह तपस्या का परिश्रम तुम्हारा सदा ही व्यर्थ है।

उद्दालक ने उत्तर दिया की महाप्रभु तप करते हमको छियालीस सहस्र बरस बीते, स्त्री के कारण अब यों उसको त्याग दें तो महा नरक भोग होए। आप बड़े हो जैसी आज्ञा करिए।

हँस के पिप्पलाद ऋषि ने कहा कि तुमको यह कहना उचित नहीं, क्योंकि बिना सन्तान योग तप कबहीं फलदायक नहीं होता है और सन्तति के लिये स्त्री के पास जाने को अगले मुनियों ने भी आज्ञा दी है। तिसमें वह ब्रह्मचारी गिना जाता है कि जो मनुष्य ऋतु समय में उसके पास जाता है। ब्रह्मचर्य्य ते तप भङ्ग नहीं होता, धर्म्मशास्त्र भी कहता है।

ऐसी सांची सांची बातें कहके मन में वेद के मन्त्र जपते हुए पिप्पलाद मुनि ने फिर निपट समीप जा उद्दालक से कहा कि सन्तति के हेतु भार्य्या के पास जाने से तनिक भी दोष नहीं, आप स्वायंभुव मुनि ने ऐसा कहा है। यह वृत्तान्त वैशम्पायन राजा जनमेजय से कहते हैं।

जब इतना कह पिप्पलाद वहां से बिदा भए तब उद्दालक चिन्ता करने लगे कि "देखो, हमारी तपस्या में क्या विघ्न आ पड़ा। कहां मेरी बुढ़ापे की अवस्था कि एक भी केश काला नहीं, सो सन्तति के कारण किससे कन्या हम मांगें। कौन उसको देने में प्रसन्न होगा।

ऐसे व्याकुल होकर मन में ठहराया कि अब तो ब्रह्मा के पास चलिए, वेही हमारी अभिलाष को पुरावेंगे।

तब आस पास के ऋषियों से पूछ ब्रह्मा के निकट गए, दूर ही से दण्डवत कर हाथ जोड़ लगे स्तुति करने।

उद्दालक के बचन सुन सन्तुष्ट हो वो ध्यान में जो थे सो आंख खोल पितामह बोले "कि हे ऋषीश्वर! कुशल से हो?

तुम्हारे आश्रम में मङ्गल है? और यहां आवने का प्रयोजन सुनावो"।

ब्रह्मा की बात सुन उद्दालक ने कहा कि "हां महाराज, आप के अनुग्रह से सब प्रकार से आनन्द है। मुनियों ने हमको पुत्र के लिये विवाह करने की आज्ञा दी है। इसलिये तुम्हारे शरन में आए, हमारा मनोरथ पूरण करिए"।

सुनते ही विधाता ने कहा कि "पहिले तुम को महातपस्वी कुलउद्धार करने योग्य पुत्र होगा। पीछे राजा इक्ष्वाकु के कुल की महासुन्दरी कन्या जो पतिव्रता सब गुण भरी सो तुम्हारी भार्य्या होगी। चित्त में कुछ चिन्ता मत करो। हमारा कहा कभी झूठ न होगा। अपने आश्रम पर जा शिव पूजन करो"।

प्रजापति की बात सुनि चकित हो उद्दालक ने कहा कि "महाराज! आप बड़े होकर ऐसी मिथ्या बात कहते हो कि जो देखने में आई, न सुनने में। भला, बिना भार्य्या भी किसीको पुत्र होता है?"

उनका यह बचन सुनते ही ब्रह्मा वहां से गुप्त हो गए। तब उद्दालक ने जी में जाना कि विधि का कहा अन्यथा नहीं। इस आस पर वहां से ईश्वर का ध्यान करते हुए अपने आश्रम पर आए कि जहां चारों ओर ऋषि लोग अपने अपने जप ध्यान में लगे थे।

राजा जनमेजय से वैशम्पायन कहते हैं कि हे राजा! यह बहुत अच्छी कथा है इसे कान दे सुनो।

वहां से उद्दालक स्थान पर आए फिर उसी प्रकार चित्त लगाय तपस्या करने लगे। पर दिन रात स्त्री की चिन्ता में बहुत मग्न थे इसलिये काम से पीड़ित भए।

निदान एक दिन इसी ध्यान में थे कि उनका बीज पतन हुआ। तुरन्त उसे हाथ में ले कमल में रख कुश से बांध गङ्गा में जा छोड़ दिया। दैवयोग वह बहा हुआ चला सो राजा रघु की पुरी के सामने आ पहुंचा।

वहां चन्द्रावती नाम उस राजा की महा सुन्दरी कन्या, जिसके लक्षणों का बर्णन न तो किया जाता है, न तो कोई वैसी देवतों

की कन्या न गन्धर्व और नागों की देखने में आई, न सुनने में, कि जिसके रूप को देखके जग जीतने वाले कामदेव भी मोहित होए और तीनों लोक में ऐसा कोई नहीं कि उसकी आंखों के देखने से अचेत हो न गिरे। दश सहस्र राजों की कन्या दिन रात उसकी सेवा टहल में रहती थीं अपने बाप के घर में नाना भांत आनन्द विहार किया करती। सागर में लक्ष्मी वो तारन्ह में चन्द्रमा समान शोभती, सब रनिवास में उसके चौथाई भी रूप किसीको नहीं कि जिसको देख कर आपस में लोग सब कहते थे कि इसे विधि ने अपने हाथों से बनाया। कोई तो कहता था कि अरे! यह इन्द्र की अप्सरा है किसीके शाप से इहां आ पहुंची। औ राजा रघु को जो पूछो तो जिनका इक्ष्वाकु के कुल में जन्म, वेद शास्त्रों में एक, बड़े धर्म्मात्मा, सारी पृथ्वी का पति, काम लोभ के जीते हुए, प्रजा पालने में सदा प्रसन्न, ब्राह्मणों का भक्त, कि जिसको सत्य ही व्रत, उसके राज्य में न तो किसीको कुछ रोग और दुःख होए, हृष्ट पुष्ट, सब लोग अति पराक्रमी और बड़ों के आगे छोटों का मरण न था औ नित्य घर घर मङ्गलचार होता था।

वैशम्पायन जनमेजय से कहते हैं कि हे महाराज! उस राजा की चन्द्रावती कन्या तरुण अवस्था में सहेलियों के साथ सब दिन गङ्गास्नान कर षटरस भोजन वो सोरहो शृङ्गार किया करती थी।

एक दिन सखियों का सिंगार कर मोतियों के हार उनके गलों में डाल, घोड़ों पर चढ़ाया। किसीके हाथ में ध्वजा, वो किसीके छत्र, किसीके कर में चौंर। कितनी गाती थीं कितनी बजाती, कितनी नाना भांति कुतूहल करती थीं।

उसी समय में ब्राह्मण सब आय आय मङ्गल वेदध्वनि और भांट भिखार* राजा रघु के वंश का बखान करने लगे। घड़ी भर में वो गङ्गा के तट पर जा पहुंची। वहां बहुत सा विहार कर उन्हींके साथ जा स्नान करने लगी, कि देखती क्या है कि एक कमल का फूल सोने का सा बनाया, महा सुगन्ध, कुश से लपेटा हुआ सन्मुख बहा चला जाता है। तो बिलग बिलग कहने लगी।

---

* भिखारी। (?)

कि देखो देखो, क्या अच्छा फूल बहा आता है; इसको कोई मुझे शीघ्र ला दो। मैं जानती हूं कि स्वर्ग पर से किसी देवता का वह गिर पड़ा है कि जिसकी छबि से गङ्गा के दोनों ओर अब कैसे शोभायमान हो रहे हैं।

सुनते ही एक सखी ने झट ला राजपुत्री के हाथ में दिया। वह बहुत प्रसन्न हो खोल कर ज्यों लगी उसे सूंघने, कि वह बीज जिसे उद्दालक मुनि ने उसमें रक्खा था, नाक के पथ से पेट में चला गया। पर चन्द्रावती ने कुछ भी न जाना कि मेरे उदर में क्या गया है और स्नान पूजा कर हर्षित हो अपने मन्दिर में सबके सङ्ग चली आई।

पहिले मास में तो उस कन्या को कुछ अधिक सा देह में रूप उपजा और दूसरे में गर्भ का लक्षण जानने में आया। तीसरे में पियरा मुँह हो गया। चौथे में रोंए अलग अलग होने लगे, पांचवें में कुच व नितम्ब ऐसे भारी हुए कि जिनके भार से अलसा कर किसी से कुछ बात चीत न कर सकती। छठवें महीने में उसकी माता बड़ा सा पेट देख व्याकुल हो तुरन्त धरती में गिर पड़ी। क्षन एक तो मूर्छित रही, पीछे कुछ एक चेत कर उठ बैठी और लगी सोचने कि क्या मैं यह स्वप्न देखती हूं, कि मेरी मति में कुछ भ्रम हुआ है कि जिसका सम्भव नहीं सो देखने में आया।

ऐसे विचार, फिर लगी कहने कि देखो रे भाई! दश सहस्र राजकन्या सदा इसकी रक्षा में रहती हैं, तिस पर भी यह दशा हुई है! हाय! हाय! कैसा कुल में कलङ्क हुआ! जो सुनेगा सो क्या कहेगा?

इस भांति पछिता कर उससे पूछने लगी कि अरे बेटी! यह क्या तेरी अवस्था है? सत्य बात हमसे कहो।

तब वह बोली माता! मैं कुछ नहीं जानती हूं कि कैसा चरित्र हुआ। मैं बड़ी अभागिनी हूं। अब प्राण ही त्यागना बना, क्योंकि किसी प्रकार से कहूं पर हमारी बात को कोई कदही सांच नहीं मानेगा। कहां सूर्य्य का बंश, कि जिसकी उत्तम कीर्त्ति तीनों लोक में प्रसिद्ध है, और कहां उस कुल की हम कन्या कि जिसकी जग में अब ऐसी हँसी होगी! अपने पिता को कौन मुंह

दिखाऊंगी। नहीं जानती हूं कि अगले जन्म में कैसा काम किया कि जिसका महादुःखदायक यह फल आन पहुंचा है। जैसी शोक सन्ताप में अब हूं वैसी त्रिभुवन में जो ढूँढ़ो तो न कोई देवतों की कन्या, न गन्धर्ब और असुरों की, न नागों की, न किसी किन्नर और मनुष्यों की होगी।

अपना पेट फाड़ मरों तो मर सकती हूं, पर आत्मघात वो दूसरे एक जीव का बध कि जो मेरे गर्भ में है, ये दो हत्या होती हैं, इसलिये सो भी न कर सकती हूं। कहो क्या कहती हो ?

वह कहते ही पृथ्वी में गिर पड़ी जैसी कोई फूली फली लता पेड़ पर से नीचे गिर पड़े।

ऐसी उसको देख रानी छाती पीट कर बोली कि बेटी! क्या जाने किसने तुमको छला कि जिससे ऐसा काम किया। अब क्या करें, कहां जाऊं औ किसको पूछूं ?

इस भांति बहुत सा बिलाप कर निदान वह भी धरती पर गिरी। तुरन्त सहेलियां उठा कर अनेक प्रकार से समझाने लगीं।

यह वृत्तान्त सारे राज में फैल गया। दिन रात घर घर यही चर्चा हो रही कि देखो रे भाई! स्त्रीजन का विश्वास न करना, राजा रघु ने चन्द्रावती को लड़कई से आज तक सुग्गा सा पढ़ाया। वो वैसाही मानते रहे हैं। ब्रत नियम पूजा ध्यान में उसकी लगन देख कर जी में महाराज बहुत प्रसन्न थे कि यह कोई देवी है कि सुतपस्या से चूक के हमारे यहां आ जन्मी है। इसलिये दश सहस्र अपने जात भाई की कन्या उसकी सेवा में रखी थी वो बेटों से भी अधिक प्यार करते, वो निपट भोली सी जानते थे, और ऐसा नेम आचार कि सब दिन भली भांति से गङ्गा स्नान वो ठाकुर की पूजा, पुराणों का श्रवण होता है, और बिवाह के लिये कितना हठ हुआ पर यह अभागी ने न माना, औ कुकर्म्म किया तो ऐसा कि जिससे राजा रघु के कुल में कलङ्क लगा।

कोई तो लगा कहने कि हे भगवान! सब दो पर लड़की नहीं कि जिससे लोक में हँसी होय।

वहां रानी उनके कहने से दो एक दिन तक उस बात को छिपाए रही। जब जाना कि अब लोगों में यही बात कानाकानी

हो रही है, तब भय से डरती कांपती और नैनों से आंसू ढलकाती, जैसे सोने की लता पर से मोतियों के फूल झरें, कहने लगी कि महाराज! बड़ा अनर्थ हुआ, इसका कुछ पारावार नहीं। जीवदान मिले तो यह आपके आगे कहूं कि जिसके सुनने से रोएँ खड़े होंगे।

यह सुनते ही राजा चहुंक उठे क्षण एक तो ईश्वर का ध्यान किया, फिर बोले कि महारानी! शीघ्र कहो। क्या ऐसा अनर्थ हुआ कि जिससे इतनी घबरा रही हो? मैंने जीवदान दिया। इसका कारण कहो। हमारे जीते ही तुम्हारी [यह अवस्था होय। रानी बोली महाराज! बड़ा अद्भुत वृत्तान्त है। आपकी कन्या को बिना पुरुषसंसर्ग के गर्भ भया है, सो यह कुल को दूषन देनेहारा और कीर्ति को नाश करनिहारा है। यह सुनि राजा क्षण भर तो चुप रहे। पीछे क्रुधित हो बोले, अरे पापिनी! तूने यह क्या किया? ऐसा कहके उसके वन में छोड़ आने की आज्ञा दी।

यह आज्ञा पाय सेवक रथपर चढ़ा उस रोती भई कन्या को वन में छोड़ आए। उस बन में व्याघ्र और सिंह के भय से वह अकेली कमल के समान चञ्चलनेत्रवाली व्याकुल हो ऊंचे स्वर से रो रो कहने लगी कि अरे विधना! तैने यह क्या किया? और बिछुरी हुई हरनी के समान चारों ओर देखने लगी। उसी समय एक ऋषी जो सत्य धर्म में रत थे] इन्धन के लिये वहां जा निकले दूर ही से उसका रोना सुनके अति व्याकुल हो लगे सोच करने कि यह तो अनाथ स्त्री कोई कांदती* है, इस महाबन में कहां से आई? कौन सी विपत्ति में पड़ी है।

तब मुनि से रहा नहीं गया, सो निकट चले आए और देखकर जी में कहा कि हो न हो यह अहल्या है कि द्रौपदी, कि इन्द्र की अप्सरा तिलोत्तमा कहीं से भूल पड़ी। इसके हाथ पांव के आगे क्या कमल का फूल कि जिनके देखने से तनिक भी नहीं मेरी आखें तृप्त होती हैं। और चन्द्रमा समान बदन, केहरि कटि, मृग का सा चञ्चल नयन, बड़ी बड़ी छाती कि जैसे सोने का दो कलस होय, लाल अधर, तोते की सी नाक कि जिसके नीचे एक तिल कुछ और ही शोभा दे रहा है। इस भांति रूप देख चकित

---

* बंगला में कांदना रोने को कहते हैं।

हो निदान पूछा कि न्हो कहां से आई हो ग्रैार क्यों इतनी ग्रातुर हो रोती हो ?

कन्या बोली महाप्रभु ! मैं राजा रघु की बेटी हूं। चन्द्रावती मेरा नाम है। मुझसी अभागो दूसरी कोई नहीं। दश सहस्र नृप-राजाओं की कन्या के बीच में रहके कि किसी पुरुष का मुंह अपने जानने में न देखा वो नाना प्रकार के भोग बिलास छोड़ सदा मैं ठाकुर की सेवा करती थी। न जानूं कि यह गर्भ कहां से हुआ। इस कारण पिताने देस निकाल दिया। यह सत्य बात आप के आगे कही, पर बिश्वास न कीजिएगा।

ऐसा उसका मधुर बचन सुनके ऋषि दया कर बोले कि आज से तू मेरी धर्म्म की बेटी। आवो हमारे आश्रम पर चलो। ग्रैार भी मुनि लोग वहां रहते हैं, उनके समेत अपनी बिपत्ति काटो जब तलक अच्छा सा दिन न आवे।

मुनि की बात सुनि चन्द्रावती बोली कि हे स्वामी ! बहुत अच्छा। इस दासी पर बड़ी दया की जो आके दर्शन दिया। आपके अनुग्रह से सब पीड़ा हमारी दूर हो गई। अब तुम्हारी सेवा टहल से संसार-सागर पार हो जाऊंगी।

इस प्रकार प्रार्थना कर उठ खड़ी भई। साथ साथ उस स्थान पर आई कि जहां सैंकड़ों ऋषिलोग अपना अपना योग तप पूजा अर्च्चा कर रहे थे। वो कुण्ड में क्या अच्छा निर्मल पानी कि जिसमें कमल के फूलों पर भौंरे गुंज रहे थे, तिस पर हंस सारस चक्रवाक आदि पक्षी भी तीर तीर सोहावन शब्द बोलते आस पास के गाछों* पर कुहू कुहू कोकिलैं कुहुक रहे थे, जैसा बसन्त ऋतु का घर ही होय।

राजपुत्री पवित्र आश्रम देख, वहीं सन्तुष्ट हो जी में लगी कहने कि ईश्वर ने बड़ीही दया की जो गर्भ मुझको दिया। नहीं तो राजभोग छोड़ वो पिता माता की प्रीति की डोरी तोड़ क्योंकर इन महापुरुषों का दर्शन होता। भला ये भी अच्छा ही हुआ जो लोगों में हमारी हँसी हुई। ग्रैार अब एक चित्त हो इन मुनियों की सेवा वो योग तप करूंगी वो आवागमन से छूटूंगी। ऐसा विचार रहने लगी।

---

* बङ्गाल में गाछ वृक्ष को कहते हैं।

जब नवां महीना बीता तब सकुचा सिर झुका उसने ऋषियों से कहा कि महाराज अब पूरे दिन चले आते हैं, इसलिये मैं एक दूसरे स्थान में जाया चाहती हूं जो आराम से बालक हो वो यह यज्ञशाला न अशुद्ध हो।

तब तपस्वियों ने तुरन्त किसी बन में, कि जहां घने घने पेड़ों पर लता पसर रही थी, उनके नीचे कोठरी सा बना हुआ एक स्थान बता दिया।

प्रसन्न हो वहां वह गई। एक दिन ज्यों लगी उसे वेदना होने, त्योंहीं कुञ्ज के द्वार पर जा सूर्य्य के ओर सन्मुख हाथ जोड़ खड़ी हो लगी कहने कि हे त्रिलोकनाथ! तुम सब ही के अन्तर-यामी हो। और हे इस बनके देवता और देवियो! तुम सब भी मेरी बात को कान दे सुनो। जो मैंने स्वप्न में भी कदही आज तक किसी पुरुष का मुंह न देखा होय तो यह गर्भ जैसा ही हुआ वैसाही निकल जाय।

इस भांति बिनती कर भीतर जा बैठी और आंख मूंद ध्यान करने लगी। इतने में गर्भ नाभी से हृदय में आया। वहां से कण्ठ में जा नाक के पथ से महातेजस्वी सूर्य्य समान पुत्र उत्पन्न हुआ।

देखते ही चन्द्रावती बहुत आनन्दित हो तुरन्त उसे गोदी में ले उस तपस्वी से जो साथ से वहां लाया था पुकार कर कहा कि हे पिता! नाक से हमको अति सुन्दर बालक हुआ। क्या नाम रखें? इस समय कैसी लगन है? वह बोले कि नाक से भया इसलिये इसका नासिकेत नाम हुआ, वो लगन से जाना गया कोई बड़ा ही महापुरुष योगी होगा कि जिसके आगे देवता सब भी हाथ जोड़े रहेंगे।

इतना कह मुनियों को बुला मङ्गल गान कराया। वैशम्पायन कहते हैं कि हे राजा! दस दिन के बीतने पर चन्द्रावती न[illegible] [illegible]ध पिला लड़के को घर में सुला कर फिर ऋषियों की सेवा करने लगी।

एक दिवस उनकी टहल करते कुछ बिलम्ब हुआ सो बालक जाग उठा। मारे भूख के चिल्ला चिल्ला के रोने लगा। [illegible] कोप से आकुल हो उसके निकट जा लगी कहने [illegible]

देख, तेरे कारण मा बाप ने घर से मुझे निकाल दिया वो लोगों में हँसी हुई। तू बेटा नहीं कोई बैरी आ जनमा। अब हमारी तपस्या वो मुनियों की सेवा में बाधा करने चाहता है। इससे तेरा दूर ही होना अच्छा है"।

ऐसे कह एक घास के बोझे पर रख के उसे गङ्गा में बहा, आप जा मुनियों को हर्षित हो फिर सेवने लगी कि जिससे थोड़े ही दिन में ज्ञान विज्ञान को पहुंची। और बालक जो बहा हुआ चला, सो कुछ दूर आगे गङ्गा के तीर उद्दालक ऋषि स्नान करते थे, उनके समीप आ लगा।

देखते ही वह चकित हो चारों दिशा चितैाने लगे कि किस निर्दई ने घास पर इतना बड़ा लड़का बहा दिया है! कुछ भी उसके जो से दया न उपजी! इतने में ब्रह्मा की बात उनके मन में आई कि जो पहिले पुत्र तिस पीछे तुमको स्त्री मिलेगी।

तब तुरन्त हर्ष से दूने हो वही लड़के को गोदी में उठा लिया और वेदमन्त्र से नहलाय बाहर आए। बार बार विधि की स्तुति करने लगे कि धन्य हो पितामह, तुम्हारा कहा क्योंकर झूठ होए। चलो पुत्र की चिन्ता तो गई। अब भली भांति से तपस्या करूंगा जो स्वर्ग से न टलूंगा।

ऐसे विचार अपने आश्रम पर पहुंच पुत्र को कहा कि सुनो पूत! यह पुण्यस्थान में नाना प्रकार के आचारों से महर्षियों को प्रसन्न, पिता की सेवा, कन्द मूल आहार करते रहो, जो इसी में सब विद्या भी तुमको अनायास आ जायगी।

इतनी आज्ञा कर उद्दालक मुनि योग्य पुत्र पा कृतार्थ हो अपनी क्रिया में अति सावधान भए।

वैशम्पायन राजा जनमेजय से कहते हैं, हे महाराज! थोड़े दिन बी[illegible]र जब रघु की पुत्री का क्रोध सब मिट गया, तब पुत्र का [illegible] मोह हुआ कि जिससे शोकसागर में डूबी चारों दिशा [illegible] सो अंधार ही देखने में आया।

चौपाई

[illegible] कुछ नहीं भावे। रह रह नयन नीर भर आवे॥
[illegible] भर धीर न पावे। आकुल हो हो समय बितावे॥

दिन रात रोने कलपने वो कहने लगी कि धिक्कार है मुझको जो बिन अपराध बालक को नदी में बहा दिया। क्या मेरी तपस्या यह फलैगी कि जिसने ऐसा अधर्म किया, मनुष्य तो क्या कोई पशु भी न यह काम करेगा कि जो मैंने किया है। हाय पुत्र! कहां गए? तनिक भी मेरे मन से न भूलते हो। अब बिना तुम्हारे मिले न तो मैं कुछ खाऊंगी न पीऊंगी।

ऐसे विचार पुत्र के लिये आकुल हो वहां से उठ जहां तहां बौड़ी सी दौड़ी फिरती और जिस तिस बनबासियों से पूछती कि अरे लोगो! तुम सबने इधर एक लड़का तो कहीं नहीं देखा है?

जब किसीने कुछ भेद न बताया तब शोक संताप से अचेत हो निदान गङ्गा के तीर तीर उसे ढूंढ़ती हुई चली। सो कुछ दूर आगे बढ़ गई कि जहां बहुत से मुनियों के सुथरे सुथरे आश्रम थे और वोही बालक वहां गङ्गा में नहाने को आया था।

देखते ही हर्ष से चौगुणी भई वो झट उसे गोदी में उठा बार बार मुंह चूमने लगी कि कहो पुत्र किसने इतना बड़ा पाल के किया? उस मुनि का कौन सा आश्रम और क्या नाम है? मैं तुम्हारी माता हूं क्यों मुझे नहीं चीन्हते हो?

बालक बोला कि माता! मैं उद्दालक ऋषि के स्थान में रहता हूं कि जो एही साम्हने देखती हो और वो ही हमारे पिता माता देवता गुरु हैं। अबहीं कन्द मूल लाने बाहर गए हैं।

यह बचन कह अपने आश्रम पर उसे वह ले गया और आसन दे बैठाया। पानी लाकर पांव को धो दिया वो कहा कि माता तुम इहां आराम करो, तब तक इस अग्निशाला को हम लीपते हैं।

सुनते ही वह बोली कि पुत्र! तुम रहो, आज मैं ही लीपौंगो। ऐसे कह उठके सारे घर को बोहार सोहार गोबरी मिट्टी पानी ला [illegible] बाहर भीतर बहुत सुन्दर लीप पोत आप गङ्गा के तीर जा बैठ [illegible]

इतने में उद्दालक ऋषि बन से कन्द मूल ले आन पहुंचे। [illegible] हो आश्चर्य माना कि आज तो बड़ी भांति से शाला लीपी गई। [illegible]

निदान हँसके बोले कि पुत्र! हम तुम्हारे भक्तिभाव [illegible] प्रसन्न भए। मांगो, हमसे क्या बर चाहते हो। तब [illegible] कहा कि महाराज! यह काज मैंने नहीं किया, मा मेरी [illegible]

उन्होंने आश्रम को ऐसा सोहावन किया है। उद्दालक ने पूछा कि बेटा ! तुम्हारी माता कहां है ? बुला लावो, हम देखेंगे।

सुनते ही वह गङ्गातीर दौड़ा गया और मा से बोला कि पिता हमारे आए हैं, तुम्हें बोलाते हैं। चलो, वहां अहार कर रहो।

वो बोली कि पुत्र ! क्या अजगुत कहते हो कि जिससे लोक में निन्दा और अन्त में नरक होय। भला सुनो तो, पिता माता भाई गोतिया ये सब कन्यादान कर सकते हैं, पर पुत्र को कहीं नहीं सुना जो अपनी माता को और किसीको देता है।

वो क्योंकर मैं बड़े कुल की कन्या, फिर तिसमें तपस्विनी, अपनेसे पति करूं ? सो हमारे कहे से जाव, यह सब बात चीत सब बाप से कहो, वे जैसा कुछ उचित होगा सो करेंगे।

तब वह उठ पिता के पास आया। देखते ही वे बोले अरे पुत्र ! अकेले ही तू चला आया, उसको क्यों नहीं लाया ?

नासिकेत ने कहा कि महाराज ! मैंने तो कहा था, पर आप के निकट आना उनके जी में न आया और उन्होंने कहा कि सुनो पूत, मेरे यह युवा अवस्था से मत भूलो कि जिसी किसीके पास यह जाती है। मैं जवान हूं सही, पर सैकड़ों पतिव्रता में एक पतिव्रता वो राजा की कन्या हूं; बिना ब्याह तुम्हारे पिता के निकट नहीं जा सकती। वे भी वेद पुराण सब शास्त्रों से इसका दोष जानते होंगे।

उद्दालक बोले कि अच्छा, पुत्र, जाना, बिना विवाह यहां नहीं आवेगी। फिर जा पूछो कि तुम कैान से राजा की कन्या हो, वो अल्प वयस में बनवास हुआ सो क्या कारण। हम जो तुममें जन्मे सो किस प्रकार से, इसका उत्तर ले आवो।

पिता का सन्देस फिर उसने अपनी माता को जा सुनाया। वो बोली कि पुत्र! तुम्हारे पिता तो सब हमारा वृत्तान्त आप ही जानते होंगे, क्योंकि बड़े सिद्ध हैं। तैा भी सुनो मैं कहती हूं।

आज काल सारे पृथ्वी का पति ऐसे राजा रघु को ईश्वर ने बनाया है कि जिसका उत्तम जश देवता लोग भी स्वर्ग में गान करते हैं औ सब धर्म्मातमों में आगे वही गिने जाते हैं। उन्हीं-की मैं बेटी हूं। चन्द्रावती मेरा नाम है। क्या क्या सुन्दर दस

सहस्र राजाश्रा की कन्या दिन रात हमारी सेवा में हाथ जोड़े खड़ी ही रहती थीं। आदर भाव जो पूछो तो बेटों से भी अधिक पिता मुझे मानते थे।

एक दिन विपत की मारी हुई सहेलियों के साथ मैं गङ्गा नहाने को गई। वहां एक कमल का फूल कुश से लपेटा हुआ धारा में बहा चला आता था। बहुत सुन्दर देख एक सखी ने उसे हमारे हाथ में ला दिया। गांठ खोल लगी जो मैं सूंघने सो वहीं उसके भीतर से कुछ दूध सा नाक के पथ से मेरे पेट में चला गया। वो गर्भ का कारण हुआ। थोड़े दिन बीते जहां तहां यह बात कानाकानी होने लगी। निदान पिता के कान में जा पड़ी। सुनते ही वह आग हो गए। तुरन्त मारने की आज्ञा दी। पर मंत्रियों के कहने से एक महाबन में छोड़वा दिया। दैवयोग से फिरते फिरते एक मुनि वहां जा निकले। रोती हुई मुझको देख बेटी कह अपने आश्रम पर ले जा पालने लगे, वो उन्हींके स्थान में मेरी नाक से, पुत्र, तुम्हारा जनम हुआ, इस लिये ऋषि ने नासिकेत नाम रखा।

एक दिवस मुनियों के निकट हमको कुछ अधिक अटकाव हो गया, इसमें बार बार तुम घर में रोने लगे। तब क्रोध की लहर जो उठी सो आकुल हो मैं दौड़ी हुई गई। जाते ही घास के बोझ पर रख गङ्गा में जा तुमको बहा दिया। कितने एक दिन पीछे मोह से अचेत हो देखने के लिये फिर मैं गङ्गा के तीर पर गई, वो सब ठांव ढूढ़ती खोजती अब इहां आन पहुंची हूं।

माता की इतनी बात नासिकेत ने अपने पिता को जा सुनाई। बहुत आश्चर्य्य मान कर वे बोले कि बड़ों का कहना क्या कबहीं झूठ होता है! देखो, ब्रह्मा ने जो कहा सो देखने में आया। पुत्र! कन्द मूल भोजन करा अपनी माता को साथ ला रखो। राजा रघु के पास कन्या याचने को मैं जाता हूं।

ऐसे कह वहां से चले सो कई एक घड़ी में उनके नगर में जा पहुंचे। चारों ओर पुरी की शोभा और लोगों को अति सुखी देखते हुए बहुत प्रसन्न हो नृप के द्वार पर गए।

तुरन्त द्वारपालों ने रघु से जा कहा कि महाराज ! एक कोई ऋषि महातेजस्वी बाहर आय खड़े हैं।

सुनते ही वे मन्त्रियों को साथ ले दौड़े हुए आए। आवते ही मुनि के चरणों पर गिर पड़े और हाथ पकड़ भीतर लेजा अपने सिंहासन पर बैठाय कुशल क्षेम पूछ गङ्गाजल ले ऋषि के पांव पखार चरणोदक लिए। और जैसा कुछ चाहिए वैसा आदर मान कर हाथ जोड़ कहने लगे कि महाराज ! बड़ा अनुग्रह किया जो आके दर्शन दिया। अब हमारी सब क्रिया वो जन्म सुफल हुआ। चाहिए कि आज से मेरे राज में सब भला दिन हुवा करेगा, क्योंकि जहां तुम से ऋषियों की दया है, वहां सदा ही आनन्द बिहार होता है। अब कहिए किस कारण से यहां आगमन हुआ, सो इस दास को सुनाइए।

ऐसी नृप की मीठी मीठी बातों से हर्षित हो बार बार आसीस कह उद्दालक बोले कि धन्य हैं तुम्हारी माता वो पिता कि जिनको तुमसा धर्म्मात्मा पुत्र हुआ। और स्वर्गलोक में देवतों की कन्या दिन रात घर घर तुम्हारा गुण गाती हैं। तुम्हें बड़ा दानी जान कन्या याचने को मैं आया हूं। धर्म्मावतार ! वेद की विधि से हमको उसे दीजिए तो लाख गो दान किए का फल पावोगे।

यह बात सुनके नरेश ने कहा कि स्वामी ! अन्न वस्त्र हाथी घोड़ा द्रव्य जितना चाहिए सो हमसे सब लीजिए, पर कन्या तो मेरे घर में नहीं जो आपको मैं दूं।

मुनि बोले कि सत्य, वह पतिव्रता कन्या बिना व्याही हुई तुम्हारे मन्दिर में नहीं, पर कहीं होगी। कुल बढ़ाने के लिये उसको दीजिए, कोटिन्ह अश्वमेध यज्ञ का पुण्य सहज में होवेगा।

ऋषि की आश्चर्य्य बात सुन शोक से आकुल हो सकुचा कर राजा कहने लगे कि महाराज ! प्राण से भी अधिक प्यारी एक पुत्री हमको थी सही, पर कुछ दोष सुनि मारे क्रोध से उसे घर से मैंने निकाल दिया। सो आपके योग्य नहीं। और ईश्वर जाने कि अब जीवती है कि मर गई।

तब उद्दालक मुनि पिछला समाचार भूपति को सुनाने लगे। जिस प्रकार ब्रह्मा से बर मिला और अपना बीज कमल के फूल में रख गङ्गा में जो बहा दिया था विसके सूंघने से चन्द्रावती को गर्भ हुआ। सो देख राजा ने बनबास दिया। वहां एक मुनि के आश्रम पर उसको नाक से पुत्र हुआ। वो आगे नासिकेत, पीछे चन्द्रावती की अपने यहां आवने की बात सो सब मुनि ने बेवरे समेत राजा को सुनाई।

तब वे सुनकर बार बार पछिता पछिता रो रो कहने लगे कि हाय! हाय! यह देवचरित्र मैंने कुछ नहीं जाना। हम सा पापी अधर्मी दूसरा कोई नहीं जो बिना अपराध बेटी को बनबास दिया।

ऐसे कहते हुए वहां से तुरन्त हर्षित हो उठे। वो भीतर जा मुनि ने जो आश्चर्य्य बात कही थी सो पहिले रानी को सब सुनाई। वह भी मोह से व्याकुल हो पुकार पुकार रोने लगी वो गिड़गिड़ा गिड़गिड़ा कहने कि महाराज! जो यह सत्य है तो अब ही लोग भेज लड़के समेत झट उसको बुला ही लीजिए, क्योंकि अब मारे शोक के मेरी छाती फटती है। कब मैं सुन्दर बालक सहित चन्द्रावती के मुंह, कि जो बन के रहने से भोर के चन्द्रमा सा मलीन हुआ होगा, देखोंगी। देखो यह कर्म्म का खेल, कहां इहां नाना भांति भोग बिलास में वो फूलन्ह के बिछौने पर सुख से दिन रात जिसके बीतते थे, सो अब जङ्गल में कन्द मूल खा काँटे कुश पर सो कर स्यारों के चहुंदिशि डरावन शब्द सुनि कैसे बिपति को काटती होगी।

राजा बोले कि पिता माता से प्राणी का एक जन्म ही तो होता है। और सुख दुख जो पूछो तो जब जैसा बदा तब तैसा, क्या राजा क्या प्रजा, सब ही बड़े छोटे को होता है।

इतने में जहां से सखी सहेली और जात भाइयों की स्त्री सब दौड़ी हुई आईं, समाचार सुनि बहुत जुड़ाईं, मगन हो हो नाचने गाने बजाने लगीं, वो अपने अपने देह से गहना उतार उतार सेवकों को देने लगीं और अनगणित रुपैया अन्न बस्त्र राजा रानी ने ब्राह्मणों को बोला बोला दान दिया। आनन्द बधावा

बाजने लगा। हर्षित हो नरेश ने वहां से सभा में जा ऋषि से कहा कि महाप्रभु! आपने मेरा बड़ा कलङ्क मिटाया है। इस आनन्द का कुछ पारावार नहीं। अब निचिन्त हो इहां विराजिए, कन्या मंगा आपको मैं दूंगा।

ऐसे कह अमृत पदार्थ भोजन करा अति आदर से मुनि को टिकाया, वो तुरन्त सेवकों के सहित पालकी भेज नाती समेत बेटी को बन से मंगा लिया। गले लगा सब रनिवास भेंट किया। बालक गोदी में ले मतारी लड़की को घर में बैठा रो रो बन की बात पूछने लगी। भाई गोतिया हित मीत नगर के लोग देखने को आए। भीतर बाहर नृप के मन्दिर में मारे भीड़ के उथल पथल हो गया। तब भूप ने पण्डितों को बुला दिन विचार बड़ी [प्रसन्नता से सब] राजा वो ऋषियों को नेवत बोलाया। लगन के समय सबों को साथ ले मण्डप में कि जहां सोनन्ह के थम्भ पर मानिक दीप बरते थे, जा पहुंचे। मोतिन्ह से पूरा हुआ चौक में रतन जड़ा पीढ़ा रखवा उस पर वर कन्या दोनों को पटम्बर वो गलों में हीरे की माला पहिरा बैठाया और वेदविधि से व्याह आरम्भ किया। ब्राह्मण सब वेद पढ़ने लगे। भांति भांति के बाजन लगे बाजने, वो कथक गाने, बन ठन वेश्यागण जहां तहां नाचने, हर्षित हो राजा ने कन्यादान कर सहस्र हाथी, लाख घोड़े वो गौ, असंख्य बासन भूषण वस्त्र रुपैया जँवाई को यौतुक दिया। फिर हाथ जोड़ बिनती किया कि सुनिए महाराज! आपने निपट हमको सनाथ किया। मेरे घर में ऐसी कोई वस्तु नहीं कि जिससे तुम्हारी मैं पूजा करूं। देखिए, सागर को जल से, सूर्य्य को दीप से पूजते हैं, तिन्हको क्या उन से आनन्द होता है? नहीं, महात्मा लोग आदर मान ही से सन्तुष्ट होते हैं।

इतनी कह ऋषि के चरण पर गिर पड़े। अति प्रसन्न हो मुनि उठा पीठ ठोंक आशीस दे बोले कि धन्य हो राजा रघु! क्यों न हो। मुंह पर कहां तक बड़ाई करें। भगवान ने तुमको बड़ी बुद्धि दी है। ईश्वर करे यों ही सदा फूले फले रहो। और यह हमारे

यौतुक को हाथी घोड़े द्रव्य तुम्हारे ही घर में रहें, क्योंकि वन के बसने वाले तपस्वियों को इनसे क्या काज।

ऐसे कह धन छोड़ सब से मिल नासिकेत समेत भार्य्या ले उद्दालक मुनि वहां से अपने आश्रम पर आए।

तब राजा जन्मेजय ने वैशम्पायन ऋषि से कहा "ऐ महाराज! सुना है जो स्थान पर आके कुछ दिन के बीते पर पिता के शाप से जीवत ही नासिकेत यम के पास गए और आए सो सब कृपा कर हमको सुनाइए कि जिससे सन्देह मेरा दूर होए"।

वे बोले हे राजा! अति आश्चर्य्य कथा है, तुम्हारी भक्ति से बहुत प्रसन्न हो मैं कहता हूं, एक चित्त हो सुनो—

इस प्रकार राजा रघु की बेटी चन्द्रावती को व्याह साथ ले फिर उद्दालक तपस्या करने लगे और नासिकेत को योग की श्रद्धा हुई सो वे लगे योग करने।

एक दिन पिता ने उनको आज्ञा दी कि पुत्र! आज हमको अग्निहोत्र यज्ञ करना है, तुम कन्द मूल फूल फल जितना मिले सो शीघ्र जा ले आवो।

सुनते ही वे उठ खड़े भए और किसी घने बन में जा पहुंचे। वहां हंस सारसों से सुशोभित ऐसा कोई सुन्दर सरोवर देखा कि जहां अच्छा निर्मल पानी, तिस में भांति भांति के कमल फूले थे, और उसके तट के वृक्ष सब अमृत समान फलों से फले थे। तब हर्षित हो उसके तट पर जा विधि से स्नान सन्ध्या कर शिव की पूजा करने लगे और समाधि लगाई, सो बरस दिन उनको वहां बीत गया। पीछे जब ध्यान छूटा तो तुरन्त कन्द मूल फूल फल कुश वो ईंधन ले पिता के पास आन पहुंचे। देखते ही वे क्रोध से लाल आंख कर बोले—

चौपाई

इतना दिन कहो कहां लगाए। तेरे कारण बहुत दुख पाए॥
अग्निहोत्र वह यज्ञ हमारा। तुझ बिन गया अकारथ सारा॥

पुत्र करते हैं सुख पाने को, नहीं तो निपुत्र होना अच्छा। अब ही से पिता माता को दुख देने लगा, न जाने आगे क्या करेगा।

देखो अग्निहोत्र से ब्रह्मा आदि देवता और पितर सब सन्तुष्ट होते हैं, सो हमसे कुछ हो सका नहीं।

पिता की बात सुनि नासिकेत बोले कि अग्निहोत्रकर्म्म केवल संसार के बन्धन के लिये है, मेरे जानने में तो योग समान कोई दूसरी क्रिया मुक्तिदायक नहीं, कि जिसको ब्रह्मा आदि देवता सब भी साधते रहते हैं।

उद्दालक बोले वेद पढ़ि अग्निहोत्र करके करोड़न्ह बरस सुर-पुर में नाना भोग बिलास करते हैं। योग से कहो क्या होता है।

नासिकेत ने कहा वेद पढ़ि अग्निहोत्र करने से बार बार संसार में आते जाते हैं। योग साधने से इस देह से मुक्ति हो आनन्द विहार करते हैं।

यह समाचार वैशम्पायन मुनि राजा जन्मेजय से कहते हैं कि इस प्रकार पुत्र को बराबर उत्तरदायक जान उद्दालक ऋषि ने शाप दिया कि जाव, अब ही तुम यमलोक सिधारो। अब इहां तुम्हारे रहने से हम प्रसन्न नहीं। पहिले तो वे डरावने शाप से लगे कांपने, फिर धीरज कर योग के बल से तुरन्त यम के निकट चल खड़े भए।

सुनते ही आस पास के मुनि सब हाय हाय करते दैाड़ आए। सिर में जटा, अङ्ग में बभूत, केले के छिलके का लङ्गोट बांधे, मृग का चर्म्म ओढ़े, छोटा सा लड़का जान, मीठी मीठी बात कहते देख कर बहुत पछताने लगे।

पांव पकड़ मतारी रोने कलपने लगी। तब उद्दालक मुनि मोह से अकुला कर कहने लगे क्यों पुत्र! हमको बिसराए चले जाते हो। हम समान कुटिल कठोर निर्दई दूसरा कैान जग में होगा जो तुम-को शाप दे। क्योंकर, पूत उस पुरी में जावोगे कि जहां राजा कहिए तो यम है, वो महाभयावनी बैतरनी नदी बहती है, बाट में कितने एक दूर तक सदा अग्नि ऐसी बरती रहती है कि जहां पापी सब जा जा जलते हैं?

नासिकेत ने कहा पिता! कुछ खेद मत करो, आपके प्रताप से यमराज को देख शीघ्र मैं चला आऊंगा। तुमसे पिता की बात जो सदा सत्य होती आई है, सो मैं झुठाने नहीं सकता हूं। देखिए,

सत्य ही से चन्द्रमा सूर्य्य नित्य भ्रमते हैं। सत्य ही स्वर्ग में है, नहीं तो बिना उसके नरक भोग होता है। इस लिये यम की पुरी को देखूंगा। पिता! मन को आकुल मत करो। इतना कह माता सहित पिता वो ऋषि को प्रणाम कर झट वहां से अन्तर्धान हो शिव का मन्त्र जपते वो ब्रह्मा का ध्यान करते चले, और बड़े सिद्ध थे इस कारण पहर भर में धर्म की यह सभा में, कि जहां अत्रि आदि अनेक ऋषि लोग अपनी अपनी पोथी खोल न्याव विचार यमराजा से कहते थे, जा पहुंचे।

चौपाई

शिव स्वरूप अति सुन्दर बालक। निपट छोट देखत सुख दायक॥
जटा मुकुट वो भस्म लगाए। जातेहि सकल सभा (मन) भाए॥

तब सिर नवाय प्रणाम कहि हाथ जोर लगे धर्म्मराज की स्तुति करने।

वैशम्पायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं, सूर्य्य समान तेजस्वी नासिकेत मुनि को, जिनके जाने से सभा शोभने लगी, देखते ही धर्म्मराज हर्षित हो तुरन्त उठ खड़े भए। आदर मान कर निकट अपने आसन पर ऋषि को बैठाया वो प्यार से समाचार पूछने लगे।

चौपाई

बालहि पन में बड़ो सिधाई। कहो मुनीश कैसे यह पाई॥
धन्य पिता जिनके तुम भए। तुम्हें देख पातक सब गए॥
कारण कौन यहां तुम आए। बार बार मेरे गुण गाए॥
अमृत बाणी बहुत सुनाई। जोकहतसोहावनिअतिसुखदाई॥

इतनी यम की बातें सुन नासिकेत ने कहा दीनदयाल! अपनी भूल कहां तक मैं आपको सुनाऊं। जब कुमति आ घेरती है तब कैसहू कोई ज्ञानी होय, ज्ञान ठिकाने में नहीं रहता। एक तो पहिले आज्ञा में चूके ही थे, फिर ज्ञान की चर्चा में ढिठाई कर पिता को बराबर जा उत्तर दिया। इस अपराध से झट उनके मुख से यह बात निकल गई कि जा, अब ही यमपुरी को देख; तू हमारे साथ रहने योग्य नहीं। सो महाराज! पिता का बचन सत्य करने के लिये तुम्हारे समीप आया हूं। जैसी कुछ आज्ञा होए सो मैं करूं।

हँस के यम बोले कि महाप्रभु ! तुम समान मुनि को, कि जो अब ही ऐसा योग में मगन हो संसार की माया मोह त्याग जो चाहे सो करे, जहां इच्छा आवे, तहां चला जाय, देख कर अति आनन्द हमको होता है। कहो क्या मन में है सो बर मुझसे मांगो।

नासिकेत बोले ! महाराज ऐसी दया करते हो तो चित्रगुप्त समेत अपनी सारी पुरी वो धर्म्मात्मा लोग जहां पुण्य का अच्छा फल वो पापी जन नरक भोगते हैं, सो सब स्थान दिखावो। यही मेरे मन की लालसा है।

तुरन्त उनने दूतों को बुलाके कहा कि यह ऋषि बड़े सत्य-बादी मर्त्यलोक से पिता के शाप पाय यहां आए हैं। जाव, सगरे पुर का दर्शन इन्हें करा लावो, कि जिससे अपना मनोरथ पूरण कर हर्षित हों।

प्रभु की इतनी आज्ञा सुनि दूत सब वोंहीं उनको चित्रगुप्त के पास ले गए और कहा कि धर्म्मावतार ! यमराज ने हमको भेजा है। बाप का बचन रखने के लिये ये महापुरुष यहां आए। जो कुछ कहते हैं सो सावधान होकर सुनिए।

किङ्करों की यह बात सुनि चित्रगुप्त ने मुनि से पूछा की महाराज ! तुम्हारे दर्शन से निपट हम सन्तुष्ट भए, कहो क्या अभिलाष है, सो मैं पूरण करूं।

नासिकेत बोले, ईश्वर ने अति उत्तम तुमको बनाया है, सब शास्त्र के ज्ञाता, धर्म्म अधर्म्म के विचार और तेज में देखते हैं कि यम के समान ही हो। और प्राणियों के सकल कर्म्म के जाननिहार बार बार मैं तुमको प्रणाम करता हूं। पुण्य पाप के कारण से सुख दुख के जो जो स्थान इस नगर में हैं सो देखने की मेरी इच्छा है। कृपानिधान ! दया करके हमारे मनोरथ को पुरावो।

वैशम्पायन कहते हैं, इस प्रकार से बिनती किए पर चित्रगुप्त की आज्ञा ले दूतों ने नासिकेत को लेजा स्वर्ग नरक, कि जहां पुण्य पाप के फल पावते हैं, दिखा सुना प्रसन्न कर फिर चित्रगुप्त को कहते हुए धर्म्मराज के पास ले आय खड़ा कर दिया।

महातेजस्वी व समर्थ जान उनके आवते ही वे उठ खड़े भए और आसन दे बैठाय प्रीति कर पूछने लगे कि कहो नासिकेत ऋषि ! चित्रगुप्त समेत सारे पुर वो नाना भांति के लोग जो अपने अपने कर्म्म का फल भोगते हैं, देख आए ? श्रद्धा पूरी भई ?

वे बोले महाराज ! तुम्हारे प्रसाद से सब स्थान से मैं हो आया। अब माता पिता हमारे शोक से कलपते होंगे, आज्ञा करो तो उनका जा दर्शन करूं ।

तब इतना बचन सुनि धर्म्मराज निपट हर्षित भए, वो यह बर दे उनको अपने इहां से विदा किया कि आज से तुम अपने योग के बल से सब दुख से छूट और मृत्यु को जीत युवा स्वरूप हो सदा आनन्द विहार में मगन रहो । और जो तुम्हारे कुल में होगा सो हमारा कबहीं न मुंह देखेगा ।

इस प्रकार से यह वर पाय नासिकेत मुनि मन के वेग समान वहां से चले, सो पल भर में जहां माता पिता मोह से दुबरा कर मरने योग्य हो रहे थे, वहां अचानक जा पहुंचे, वो जाते ही दोनों की प्रदक्षिणा की, वो चरण छू प्रणाम कर सन्मुख जा बैठे।

[पत्नी] सहित उद्दालक ऋषि पुत्र को कुशल से देख बहुत हर्षित भये वो तुरन्त गोदी में बैठा अति आनन्द से रो रो बार वार मुंह चूमने लगे और कहने कि नासिकेत ! आज हमारा जन्म स्वारथ हुआ । हम समान क्रोधी दुराचारी पापी संसार में कैान होगा जो बिना अपराध शाप दे तुमको सङ्कट में डाला। धन्य हो पुत्र, कि इसी देह से यम की पुरी को देख ज्यों के त्यों फिर चले आए । जग में एक से एक सिद्ध हुए और हैं, पर मैं जानता हूं कि तुम्हारे गुण वो तेज को कोई दशांश भी नहीं पा सकता है। कहो कैसा धर्म्मराज का लोक व नगर है। कैसा यम का रूप, किस प्रकार की बाट कि जिससे इतना शीघ्र गए वो आए ? क्या खाने पीने को पाया ? किस रीति से बात चीत की ? और जो कुछ अचरज देखा सुना हो सो हमसे कहो कि सन्देह मिटे, वो जो करने को होय सो मैं करूं ।

नासिकेत बोले "पिता ! आपके पुण्य प्रताप से यम के मन्दिर हम गए। सब के संहार करनिहार दूत सहित यमराज, पुण्य पाप के लिखनेवाले चित्रगुप्त और भांति भांति के देवता अनगणित मैंने देखे। बड़ी स्तुति से रिझा कर यम से यह बर पाया कि इसी देह से जाओ, अब तुम्हारा जन्म मरण न होवेगा और युवा वयस सब दिन सुख में भरे पुरे रहोगे।

वैशम्पायन कहते हैं, इतने में नासिकेत धर्म्मराज के पुर से हो आया, यह सुनि ऋषि लोग बहुत चकित हो अपने अपने आश्रम में जिस भांति से तप करते थे, उसी प्रकार से यमलोक के समाचार पूछने के लिये चल खड़े भए। कितने एक तो नीचे माथ ऊपर पांव किए, और कितने एकही चरण से खड़े, कोई दोनो, कोई एकही हाथ उठाए, किसीको देखो तो मौन ही व्रत किए, कोई सूखे पत्ते ही खा, कोई निराहारी हुए, बहुतेरे संसार सागर पार होने को योग ही में मगन दिगम्बर बेष बनाए, कठिन से कठिन तपस्या में मन लगाए, जहां पिता के समीप नासिकेत बैठे थे वहां आन पहुंचे।

देखते ही वे हर्षित हो उठ खड़े भए वो प्रणाम कर मिल भेट, कुशल क्षेम पूछ, आसन दे एक एक को अलग अलग बैठा, पांव धुला, आचमन करा, अक्षत चन्दन फूल ले सबों को पूजने लगे।

तब समय जान ऋषि लोग बोल उठे कि नासिकेत ! हम तुमसे अति प्रसन्न भए। शिष्टाचार तो जैसा कुछ चाहिए वैसा हो चुका वो होता रहेगा, अब यमलोक की बात सुनावो। कैसी वह पुरी है कि जहां सदा आप धर्म्मराज विराजे रहते हैं ? कैसे यम के दूत हैं ? क्या वहां की रीति रहन ज्ञान तपस्या वो कैसी वहां बैतरणी नदी है ? और यहां जो करते हैं सो वहां कैसे भोगते हैं ? किस करम के फेर से यम के कोप में जा पड़ते हैं ? कैसा उनका दण्ड व कैसे चित्रगुप्त हैं जो प्राणियों के धर्म्म अधर्म्म लिख धर्म्मराज को जनाते हैं ? पास में उनके कौन कौन मुनि लोग रहते हैं ? सो सब कृपा कर कहो कि जिससे अति संतुष्ट हो तुम्हारे गुण को गावें।

उनकी इतनी बात सुनि बीच में बैठ नासिकेत मुनि कहने लगे कि जितने तुम साधु सन्त हो सो अब सावधान हो सुनो। ऐसी आश्चर्य्य यह कथा है कि जिसके श्रवण से रोमाञ्च होते हैं।

धर्म्मराज के लोक में भांति भांति के लोग और वृक्षों से शोभित चार सौ कोस लम्बी चौड़ी चार द्वार की यमराज की पुरी है, कि जिसमें सदा आप वे अनेक गण गन्धर्व्व ऋषि वो योगियों के मध्य में धर्म्म का विचार किया करते हैं। तिस पुरी में जिस द्वार से जो प्राणी जाता है सो मैं तुमसे कहता हूं।

देवता पितर गुरु के भक्त, क्रोध लोभ को जीतनिहारे, दान धर्म्म में सब दिन जिनकी उत्तम मति रहती है, वो जो जेठ बैसाख में जल दे प्राणियों की प्यास मिटाते, वो जाड़े में बस्त्र दे दुखी जन को पालते हैं, ऐसे जितने लोग हैं सो तो वहां पूर्व द्वार से जाते हैं, वो नाना भोग बिलास करते, और जो हरि हर दुर्गा के भक्त, अतिथि देवतों को पूजते, तीर्थों में नहाते, आहार को जीतते, गौ बचाने को युद्ध करते, ज्ञान के लिये साधुनं का संग करते, ऐसे जो महात्मा लोग हैं सो सब उत्तर द्वार से जा परमपद को पहुंच मन भावन सुख को पाते हैं। और धर्म्म में जिनकी श्रद्धा है, सत्य ही बोलते, सबसे नय चलते, पराए की हिंसा निन्दा नहीं करते, विष्णु के भक्त, परद्रव्य को मिट्टी, परस्त्री को माता समान जानते हैं, ऐसे जो कोई महापुरुष लोग हैं सो सब पश्चिम द्वार से वहां पहुंच बिमानों पर चढ़ जहां इच्छा आवे तहां जा, अपनी रुचि से आनन्द विहार किया करते हैं, और जो निर्द्दयी, पापी, कुटिल, कठोर, क्रूर, बिशील, वेद पुराण शास्त्र व देव पितरों की निन्दा करते हैं, वो गुरु को न मानते, झूठ ही बोलते रहते हैं, ऐसे जितने अधम लोग हैं सो तो महा भयावन दक्षिणद्वार से जाते हैं, और दुःख भोगने के लिये धर्म्मराज की आज्ञा से तुरन्त काली काली बड़ी बड़ी देह पाय यमदूतों के हाथ पड़ मुङ्गरों के मार से भुरकुस होते, अति अन्धकार महा महा रौरव नाम नरक में डाले जाते हैं, कि जिसमें जहां देखो तहां कीड़े कलबलाते हैं, और एक एक बाघ, सिंह, हुंडार, कुत्ते, बीछू, सांप, गिद्ध, कौए, से भरे हैं कि पापियों को देखते ही सैकड़न आ झुक पड़ते हैं वो झट

पकड़ कर आपस में ऐंचा खैंची किया करते रहते हैं तिनमें दारुण दुःखदायक विच्छू डङ्क मारने लगते हैं, बार बार विषधर डंसने को फुफकार करने, लोहे समान चोंचों से गिध कौए तिस पर ऐसे लगते हैं सताने कि जिस दुख का कुछ पारावार नहीं है। हाय! हाय! मरे रे, दौड़ो रे सदा पुकारते रहते हैं, पर बिना धर्म्म के कोई उनको बचाना चाहे तो नहीं सकता है।

इस प्रकार से यमपुरी का दक्षिणद्वार अति डेरावन है कि जहां से दूतों के बस होकर पापी लोग ऐसे महानरक में पड़ते वो नाना भांति के दुख को सहते हैं।

इससे अधिक कुम्भीपाक आदि सहस्रन नरक एक से एक मैंने देखे कि जिनमें बड़े बड़े कीट भरे वो हाहाकार शब्द दूर ही से सुनाता है। और वो महादुखदायक असिपत्र एक एक ऐसा बन है कि जहां खड्ग की धार के समान चोखे गाछों (?) के पत्ते हैं; नीचे तिसके अति दुर्गन्ध कीड़ों से आकुल पीप की नदी बहती है, वो अधमों के तलने के लिये बीच में कहीं कड़ाहों में तेल गरा गराता रहता है। बहुतेरे तो पहाड़ पर से गिराए वो शूली पर चढ़ाए जाते हैं।

यह समाचार वैशम्पायन राजा जन्मेजय से कहते हैं—

इस प्रकार से नासिकेत मुनि यम की पुरी सहित नरक का वर्णन कर, फिर जौन जौन कर्म्म किए से वह भोग होता है सो सब ऋषियों को सुनाने लगे, कि गौ, ब्राह्मण, माता, पिता, मित्र, बालक, स्त्री, स्वामी, वृद्ध, गुरु, इनका जो बध करते हैं वो झूठ साक्षी भरते, झूठ ही कर्म्म में दिन रात लगे रहते हैं, अपनी भार्य्या को त्याग दूसरे की स्त्री को ब्याहते, औरों की पीड़ा देख प्रसन्न होते हैं और जो अधर्म्म से हीन पाप ही में गड़े रहते, वो माता पिता की हित बात को नहीं सुनते, सबसे वैर करते हैं, ऐसे जो पापी जन हैं सो सब महा डरावन दक्षिणद्वार से जा नरकों में पड़ते हैं।

इतनी कथा सुना फिर नासिकेत मुनि कहने लगे, कि यम की आज्ञा से दूत सब एक किसी को इहां से ले गए वो विसे

उनके आगे खड़ा कर दिया, उसका जो पुण्य पाप का बिचार होते मैंने देखा है सो अब कहता हूं तुम सावधान हो सुनो।

यमराज की सभा में अपने अपने स्थान पर सुन्दर आसन बिछाए बैठे अत्रि, गैातम, मैत्रेय, बृहस्पति, शुक्र, वेदव्यास, जह्नु, कर्ण, भारद्वाज, दधीचि, गोभिल, दुर्वासा, मरीच, भृगु, गालव, सनत्कुमार, पुलह, पुलस्त्य, ऋतु, याज्ञवल्क, विश्वामित्र, मार्त्तण्ड, हरिमित्र व सुमित्र ये सब ऋषि लोग अच्छा अच्छा बस्त्र व भूषण पहरे द्वादश आदित्य समान शोभते, नानाशास्त्र बिचार बिचार प्राणियों के धर्म्म अधर्म्म का न्याय किया करते हैं। तिनके बीच में कानों में कुण्डल, शिर में सुन्दर मुकुट पहिरे तारन्ह में चन्द्रमा समान महातेजस्वी धर्म्मराज सदा विराजते रहते हैं।

तहां अति निर्दयी निपट डेरावन वैसेही हाथ में दण्ड लिए दूतों ने उससे पूछा कि जिसको यहां से लेजा यम के पास खड़ा कर दिया था, कि कैसा पाप तुमने किया है सो धर्म्मराज के आगे सत्य बतावो।

इतने में बीच सभा में बैठे हुए प्रकट उचित कहनिहार ऋषि लोग शास्त्र बिचार के बोल उठे कि महाराज! इस पापी ने तो ब्राह्मण बध किया है, कुम्भीपाक में कि जहां का दुख सहा नहीं जाता, अपने कर्म्म का जैसा कुछ फल है सो बहुत दिन तक भोगेगा।

यह सुनते ही वो यम की आज्ञा पाय किङ्करों ने झट उसे पकड़ लिया वो लाठियों से मारते पीटते घसीटते वहां ले चले और वोही नरक में, जहां कोई किसीको क्षण भर भी पोड़ा से बचा नहीं सकता है, डाल दिया वो तुरन्त सहस्रन कीड़े बड़े बड़े मोटे मोटे देह में लिपट गए वो मांस काट काट खाने लगे।

नासिकेत ऋषियों से कहते हैं इसी भांति गोहत्या का भो निर्णय होते मैंने देखा है, और जो अपराधी विश्वासघात, गर्भ-पात करते, काम के बस हो जिस स्त्री के पास जाने को मना है उसीसे जा भोग करते हैं, मारे लालच के नहीं खाने को, सो हैं खाते, ऐसे जितने अधम लोग हैं सो तो कड़ाहों में कि जिनमें तेल गरम हो रहा है, डाले वो शूली पर चढ़ाए जाते हैं। इस

प्रकार बहुतेरन्ह शीकरों (सिक्कड़ों) से बाँध बाँध दूत सब यम के निकट पहुंचावते हैं कि जहां तेज में सूर्य्य समान चित्रगुप्त प्राणियों के पुण्य पाप को लिख ले जा समझाते हैं, ऋषि लोग शास्त्र बिचार जैसा जिस को उचित है वैसा न्याव बतावते हैं, ऐसी धर्म्मराज की सभा और वहां का यह वृत्तान्त है और जिस जिस कर्म्म से इन नरकों में पड़ते हैं सो भी सुनो मैं कहता हूं।

जो नर चोरी आदि नाना भांति के कुकर्म्म में आप तो दिन रात लगे हैं, तिसपर भी औरों को देखते हैं, वो एक अक्षर भी जिस से पढ़ते विसे गुरु के बराबर नहीं मानते हैं, सो तब तक महानरक को देखते हैं कि जब तक यह संसार बना रहता है, और जो दुष्ट गुरु को वाद कर हराते व डाटते हैं, पिता, माता गुरु से व्यर्थ बैर करते हैं, वे सब विसी नरक में पड़ते हैं, कि जहां ब्राह्मण के बध करनेवाले जाते हैं। इसलिये माता पिता गुरु को कदहीं कोप न करावेंगे कि जिससे ऐसे ऐसे संकट को भोगेंगे। और जो कास पीतल तामा लोहा चुराते हैं, कन्यादान समय में भांजी मारते, मुनि ब्रह्मचारियों की तपस्या में जा बाधा करते हैं, और जो निर्दयी क्या घर में क्या बन में, क्या कहीं आग लगा सहस्रन जीव को जला देते हैं, सो सब असिपत्र बन में डाले व लाल लाल अँगारों पर घसीटे जाते हैं, व हाहाकार शब्द किया करते हैं।

और जो बालक, वृद्ध, स्त्री, साधु, सन्त को छलते हैं, नहीं करने को सो करते, और जो मनुष्य अच्छे अच्छे मीठी मोठी बस्तु बना छिप कर अकेले ही आप चट करते हैं, सो विस कूप में पड़ते हैं कि जो विष्टा वो कीड़ों से भरा हुआ है।

जो नर बहुत दिन तक भोग वा प्राण से भी अधिक मान किसू अपराध से पतिब्रता स्त्री को त्याग देते हैं सो सब भी असिपत्र बन नाम नरक में डाले जाते हैं वो नाना भांति की पीड़ा को सहते हैं।

इससे अधिक और भी नरक मैंने देखे कि जहां महाडरावन आग लहर रही है। अपने कर्मों से पापी लोग बार बार जलाए जाते हैं, बहुतेरे शीकरों से बांधे हुए मुँगरों के मार से नीचे गिर

विलाप कर बेड़ी सहित उठ भागते हैं, तिस पर निर्दयी यम के दूत सब तुरन्त उसे पकड़ लोहे के घनों पर पटकते हैं, कितने एक को तो गलों में फांसी लगा, किसीको दोनों पांव ही धर घसीटते वो डांट कर कहते हैं कि हा मूर्खो! बहुत सबसे बैर बिसाहे हो, क्यों अब रोते हो? अपना कमाया हुआ दुख भोगो और जो पर स्रीं कुकर्म्म किया है तिनको अष्ट धातुकी बड़ी प्रतिमा को कि जो अग्नि में लाल की हुई है अँकवार से पकड़ाते हैं वो कहते कि जैसे ही तुमने पराए की भार्य्या से विहार किया है वैसे ही इससे भी हर्षित होके करो; तिनके कहने पर जो जो तो नहीं उठते तिनको भारे लाठिन से चूर कर नीचे गिराते हैं।

ऐसे ही गज्जुन होते कोटिन स्त्रियों को भी देखा कि जो दूसरे पुरुष से अपने धर्म्म को नाशती हैं, कितने तो पहार वो तार के वृक्षों पर से गिराये जाते हैं, जो पराये का जीव मारने में अपना जनम गँवाते हैं।

जो नर किसीको खाने पीने में बाधा करते हैं सो सब भी तिसी नरक में रहते हैं कि जिसका दारुण दुःख सहा नहीं जाता है। और जो नारी स्वामी को निन्दती वो नित्य कलह करती हैं सो वहां डाली जाती हैं कि जहां बड़े बड़े सीमर के अंगारे ऐसे लहर रहे हैं। पति के मरे पर औरों से मिलती हैं, यम [illegible] को पकड़ाते हैं।

और जो पतिव्रता स्त्री की निन्दा करते हैं सो सब नरकों में फिर नाना पीड़ा ऐसे भोगते हैं कि किसी प्रकार से किसीको उससे बचाव होने का नहीं।

इस प्रकार बहुतेरे नरकों का बर्णन कर नासिकेत मुनि फिर लगे ऋषियों से कहने कि यम के पुर में और भी एक अद्भुत स्थान देख आया हूं, जहां लहराती हुई आग का सरूप उंचाई में चार व घेराव में बीस कोस महाडरावन वृक्ष है। लाखों पापी जन उसमें टांगे हुए हाहाकार शब्द को हैं करते, तिस पर अति कठोर निर्दयी यमदूत सब बज्र समान शस्त्रों से बारबार मारते

पीटते वो कहते हैं कि हा अधर्म्मियो ! कदही नहीं तुमने हर्ष से किसी देवता पितर को तृप्त किये, न कोई तीर्थ में फिरे, न किसी अतिथि अभ्यागत को कुछ दिया, वो माता पिता ब्राह्मण गुरु संसार में देवता तुल्य गिने जाते हैं विन को भी तनिक आदर से न पूजा कि जिस चूक का ऐसा फल पाते हो ।

इतना कह धर्म्मराज के दूत सब महादुखदायक नरकों में पातकियों को फिराते हैं । तिनमें किसीको देखो तो भैंसे पर कोई गीध कोई सारसों पर, कितने तो बांदरों पर, बहुतेरे स्यारों पर चढ़े हुए निपट काले महाकुरूप कि जिनका बाघ सिंह कुत्ता बिलाई का ऐसा तो मुंह, वो लाल लाल आंख, खड्ग, त्रिशूल, परसा, बरछी. लाठी, मुशल आदि बड़े शस्त्रों को हाथन में लिए यम की आज्ञा पाय नाना संकट में प्राणियों को डालते हैं। यह तो अपनी आंखों से पापियों की दुर्गति होते मैंने देखी है ।

और जहां मन भावते नाना प्रकार के पकवान दही दूध घी मिठाई वो रतन जड़ाव एक से एक अद्भुत भूषण वो भांति भांति के पटम्बर वस्त्रों की कूट सदा लगी रहती है; वो कानन में कुण्डल, गले में मोतिन की माला पहिरे, अति सुन्दर सुन्दर अप्सरा सब बीना आदि बाजा हाथों में लिए नाचती गावती बजाती रहती हैं, तिस स्थान में वो विनके संग में अच्छे पुण्य के प्रताप से उत्तम उत्तम भोग विलास करने को वे धर्म्मात्मा लोग जाते हैं वो विमानों पर चढ़े फिरते हैं । और यमराज की दया से बहुत दिन तक महा महा सुख हैं करते कि जो संसार में देवता, ब्राह्मण, गुरु इनको मन लगा भक्ति से पूजते हैं; वो जो भूमि, सोना, गौ, वस्त्र देते हैं, अतिथि अभ्यागत को आसन दे बैठाय अच्छा सुन्दर मधुर बचन बोल, कन्दमूल से भी संतुष्ट करते हैं; और जो लोग ऋतु समय अपनी स्त्री के पास जाते, वो नित्य धर्म्म पुण्य करते, ऐसे जितने नर हैं सो सब तो कधी न यम का मुंह देखते हैं ।

और जो मनोहर घर बना सोना विधि से ब्राह्मण को देते हैं सो सब तो ऐसे स्थान पावते हैं जहां जहां सोनन्ह के मन्दिर अनेक आश्चर्य्य आश्चर्य्य भोग कि जिनका कुछ बखान न किया

जाता है। और जो मनुष्य भूखे लोग को एक ग्रास भी अन्न देते और सब प्राणियों में दया करते, शरण में आए को पालते हैं, सो सुरपुर में अप्सरों के साथ जा विहार करते हैं। वो उपजे हुए अन्नों से भरा पुरा खेत अपनो श्रद्धा से जो हैं संकल्पते सो तो परम स्थान में विमानों पर कि जो जहां मन होय तहां ले जाता है, चढ़े फिरते नाना आनन्द किया करते हैं।

चौपाई

मोती मूंगा रतन हैं देते। सो हैं मणिमय गृह में रहते॥
पनहीं छत्र वो शीतल पानी। हरषि दान करते जो ज्ञानी॥
सो हैं इन्द्रपुरी को जाते। महाभोग जहं वो हैं पाते॥
हाथी ऊंट अन्न के दानी। दयाधर्म्म वो शील के खानी॥
स्थान परम को वे हैं जाते। गण गन्धर्व जहां हैं गाते॥
बड़े तीर्थ में जो हैं मरते। सो भवसागर को हैं तरते॥

और नाना भूषण पहिराय वेद की विधि से कुलीन बर को जो कन्या देते हैं, सो तो सब सहित सारी पृथ्वी दान किए का फल पाय देवतों के निकट महासुन्दर स्त्रियों से विलसते हैं कि जिनके रूप से कामदेव भी मोहित होते हैं; वो बिना धर्म्म पुण्य के जिनके दिन हैं बीतते, सो लोहा की भाथी समान सांस तो लेते हैं पर तनिक भी न जीवन का सुख को पाते हैं।

नासिकेत ऋषियों से कहते हैं, कि धर्म्मराज से पालित और जो सुन्दर स्थान मुझको देखने सुनने में आया है सो भी तुमको सुनाता हूं कि जहां यम के निकट साधु दूत सब रहते हैं वो पूर्वद्वार से धर्म्मात्मा लोगों को अमरावती में पहुंचावते हैं। और आश्विन कार्त्तिक में अन्न, जाड़े में वस्त्र, वैसाख जेठ में अच्छा शीतल पानी, बसन्त के समय में फूल फल जो नर हैं देते, सो सब बहुत दिन तक सूर्य्यलोक में बास करते वो नाना सुख को भोगते हैं। जो तो दुर्भिक्ष में अन्न वो सुभिक्ष में सोना हैं देते, सो तब तक स्वर्ग में बसते हैं कि जब तक चन्द्रमा सूर्य्य दोनो विद्यमान हैं। इस लिये चतुर लोग सब प्रकार से दान धर्म्म में चित्त दिए रहते हैं कि जिससे महा आनन्द को पावते हैं। और जल के दानी, विष्णु के भक्त ब्राह्मणों के हैं जो पूजक, सो सब हंस

चक्रवाकों से सुशोभित विमानों पर और चित्र विचित्र घोड़े हाथी मोर वो [सारसों पर चढ़ यमपुरी के पूर्व द्वार से होते अपने अपने पुण्य के प्रताप से सुरपुर में जाते हैं।

वो धर्म्मात्मा लोगों के लिये यमराज से टिकाई हुई नख से शिख लों नाना रतन जड़ाव आभरण और गज मुक्ता आदि मणि से अलंकृत उन महासुन्दरी देवकन्याओं से भोग विलास करते हैं कि जिनका चन्द्रमा सा बदन, काञ्चन सी देह, तिन में कितनी तो स्फटिक सी स्वच्छ, कोई सिन्दूर का रङ्ग, बहुतेरी अति मनोहर स्याम सरूप, सब मिल जुल नाचती गाती बजाती हुई स्वर्गी लोगों को जहां इच्छा आवे तहां सुभग विमानों पर चढ़ाए लिए फिरती हैं।

देखो यह दान पुण्य का प्रभाव कि जिससे नर सब ऐसी उत्तम गति को हैं पहुंचते। और सोना दिए से सूर्य्य के लोक, वस्त्र दिए से चन्द्रलोक में जाते हैं। अन्न के दान किए से तो मुक्ति मिलती है इस लिये सदा अन्न दान करना कि जिससे संसारसागर में के बार बार आवागमन के दुःख से छूटें, वो परम आनन्द को पावें। नासिकेतमुनि ऋषियों से कहते हैं–महा महा अद्भुत अद्भुत नरक कि जिनके श्रवन से अङ्ग सिहर आता है, वो वैसे ही बड़े बड़े बहुतेरे पापियों को देखा और उस पुण्यस्थान का मुझको दर्शन हुआ कि जहां धर्म्मात्मा लोग रहते हैं। वो निपट सुख देनेवाली पुष्पोदका नाम ऐसी नदी बहती है कि जिसमें सुवर्ण को बालू वो दूध सा स्वच्छ अमृत समान स्वाद जल वो शंख पद्म हैं। और अति सुभग फूलों से शोभित तीर तीर में घने से कलपद्रुम लगे हैं। शीतल सुगन्ध सदा मन्द मन्द समीर डोलता, हंस मोर कोकिल कपोत आदि पक्षी सोहावना शब्द करते, मत्त हो हो मधुकर सब गुञ्जते हैं। और जहां देखो तहां देवकन्या सब गाती। गण, गन्धर्व, सिद्ध, चारण नित्य आय आय विहार करते हैं। तिस नदी के तट में एक से एक लाल पीत नील श्वेत हरित आश्चर्य्य आश्चर्य्य सुन्दर सुन्दर दीप्तमान रत्नों की ऐसी खानि मैंने देखी कि जिसकी शोभा का कुछ बर्णन न किया जा सकता है।

उस मनोहर स्थान में वे नर जाते वो सुवर्ण की बालू के बीच में खेलते वो युवती युवती स्त्रियों के साथ नाना जलविहार हैं करते कि जो भक्ति भाव से देवता को पूजते वो तीर्थों में नहाते हैं। और उस नदी के तट में चन्द्र सूर्य्य समान बहुतेरे मणि वो मोती मूंगे, हीरों से रचित, सोनन्ह के सहस्त्र मन्दिर मैंने देखे कि जहां पुण्यवान लोगों को अति सुख देन को रतन जड़ाव भूषण वस्त्र पहिरे सोरह सोरह वर्ष की अप्सरों को यमराज ने टिकाया है कि जिनका कमल सी सुन्दर बड़ी बड़ी आंख वो चन्द्रमा सा बदन है।

नासिकेत कहते हैं, कि जो देवता गुरु ब्राह्मण को मानते, धर्म्म शास्त्र को विचारते, सकल प्राणियों में दया करते वो सब की भलाई में दिन रात लगे रहते हैं, तिनके विलास के लिये धर्म्मराज की पुरी में पुष्पोदका नाम नदी को भगवान ने बनाया है जो तीनों लोक में प्रसिद्ध है। न तो वहां किसीको कुछ भूख प्यास कदही लगती, न कोई शोक सन्ताप होता है, न भय, न दुःख, न किसी बात की कुछ चिन्ता और नित्य नया नया आनन्द विहार करते हैं। सब कोई विन से मीठी बात बोलते हैं।

जो पापी नित उठ सबसे कलह करते वो पराए को दुःख देते, सो तो परलोक में जा महा महा कष्ट भोगते वो बार बार हैं पछताते। तहां यमराज के दूत कहते हैं कि हा! मूर्खो! तुमने मनुष्य की दुर्लभ देह पाय कदही न हरि की चर्चा की, वो सारे जन्म पाप ही में लगे रहे, कि जिसके करने में क्षण भर का तो सुख, पर कोटिन्ह बरस का नरक बास होता है। अब रोने कलपने से कहो क्या होगा जब समय गया है बीत, और कहा भी है–

दोहा

आछे दिन पाछे गए, कियो न हरि से नेह।
अब पछताए क्या भए, छूट गया जब देह॥

यह तो दूतों का बतकहा है। और जिस जिसके लाने को धर्म्मराज बिन को बरजते हैं सो हम तुमसे कहते हैं–कि जिनके गलों में तुलसी की माला, सुन्दर तिलक, प्रेम से शालिग्राम को पूजते, सदा राम नाम हैं जपते, पर स्त्री को माता सी हैं समझते,

वो एकान्त स्थान में पड़ा पराए के धन को देख मिट्टी सा त्यागते, वो सत्य ही बोलते, सबसे नय चलते, धर्म्म पुण्य में चित्त देते, तीर्थों को करते, क्रोध लोभ आहार को जीतते, वेद पुराण शास्त्रों को मानते, न दुःख से अकुलाते, न सम्पति पाय बौराते, ऐसे जितने उत्तम जन सो सब ईश्वर के हैं भक्त, दूर ही से प्रणाम कर छोड़ देना।

इस भांति सदा यमराज अपने दूतों को सिखलाते पढ़ाते रहते हैं। सो भी मैं तुमसे कह चुका।

अब नाप में तीन लाख चौआलिस सहस्र कोस का वह पथ है कि जिससे धर्म्मराज के लोक में लोग हैं जाते, और उस मार्ग में जो जो अद्भुत मुझको देखने में आया है सो सब वर्णन कर सुनाता हूं। पहिले तो विस बाट में कुछ दूर तक जहां देखो तहां महा दुखदायक आग लग रही और कहीं तो अति अन्धकार हो रहा है, और कोई ठांव बड़े बड़े चोखे चोखे काण्टों से छाए हुए ऐसे पर्व्वत मिलते हैं कि जिनपर चढ़ने से दारुण पीड़ा होती है। कहीं देखो तो लोहों की खूंटी व सूई सब गाड़ी हुई हैं तिस पर ऊंचे सों अति अन्धकार हो रहा है। थोड़ी दूर आगे उसके कितने एक कोस तक बालू है धीपता, वो बहुत स्थान में निपट पाला है परता, कि जिनके हेलने से महा एक आफत आन पहुंचती है, तहां कठिन कठोर क्रूर निर्दयी यमदूत सब सीकरों से बांध पापियों को लिए फिराते, वो लोहों की लाठी आदि नाना प्रकार के शस्त्रों से मार मार भुरकुस कर डालते हैं, वो बार बार करुणा करते सब रोते हैं, पर बिना धर्म्म कुछ त्राण नहीं पाते। नासिकेत मुनि ऋषियों से कहते हैं, उन अधर्म्मियों के लिए बना कि जो ब्राह्मण वो पशु पक्षी को बधते, गुरु स्वामी को निन्दते, बालक वृद्ध, स्त्री, अनाथ, पथिक, इनका धन हरते, वो महा पाप कर छिपाए रहते, विष दे ब्राह्मणों को मारते, वो व्यर्थ सगरे दिन हाहा भूत हो फिरे फिरते हैं; उस दारुण पथ में अन्त पानी को तरसते वो नाना गञ्जन भोगते। और भी बहुतेरे पातकियों को मैं-ने देखा कि जिनको क्रुद्ध हो हो दूत सब बार बार डांहते मारते धमकाते वो कहते हैं कि अबही हुआ क्या, जो जो सङ्कट आगे

आवेंगे सो देखोगे। मनुष्य का उत्तम जन्म पाय तुमने तृण जल भी न किसी को दिया कि जो अति सुलभ वो सहज में है मिलता। क्या यमलोक के कठिन बाट को नहीं सुना था कि जहां पापियों को मरन योग आ लगता है।

कवित्त

नरक बिनासी सुख के रासी हरि चरित्र नहिं गाए।
क्रोध लोभ को नीच सङ्ग कर कहो कौन फल पाए॥
त्यजि आचार महा मद माते हृदय चेत में ल्याए।
आतुर ह्वै नारिन के पीछे मानुष जनम गंवाए॥

और न तो कद्‌ही तीर्थ व्रत किए, न कोई ग्रहण समय में गैा भूमि, सोना, रूपा आदि दान कुछ दिया। अब बिना पुण्य धर्म्म के निपट भयावन यह नरक समुद्र को क्योंकर पार होना चाहते हो। सो वैशम्पायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं—

इतनी कथा जब नासिकेत ने सुनाई तब तो ऋषियों ने पूछा कि महाराज। अति दुःखदायक यमलोक के पथ में किस प्रकार से जाना पड़ता है वो कौन [कर्म्म करके] वहां से हैं छूटते, सो अब कृपा कर वर्णन करो कि जिससे हमारे मन का सन्देह जाय, वो मगन हों तुम्हारे जस को जा गावें।

वे बोले संसार सागर में जितने प्राणी हैं सो सब मृत्यु के बश हो स्त्री आदि कुल परिवार और अन्न धन लक्ष्मी इन समेत देह को त्याग प्रेत रूप हो बिना सङ्ग साथी के अकेले ही बिस बाट से जाते हैं। तिनमें जो तो पुण्यात्मा लोग हैं सो अपने धर्म्म के बल से महा दारुण मार्ग को सहज में पार हो देवता का रूप पाय धर्म्मराज की पुरी में ऋषियों के साथ उत्तम उत्तम भोग हैं करते।

और जो तो हैं पातकी सोई हैं अटकते वो नाना दुःख को सहते; तिस पन्थ में एक से एक महाभयावन बहुतेरे स्थान मैं ने देखे; पर आठ तो निपट डरावन हैं कि जिनमें पहिले बड़े बड़े काँटों के वृक्षों से भरा हुआ चार सौ कोस का एक ऐसा है कि जहां दूर ही से अति हाहाकार शब्द सुनने में आता है, वो महा महा दुःख से पापीजन वहां से हैं निकलते। दूसरा आठ सहस्र

कोस का तप्त बालुका कि बिना पनहीं दान के विसको पार होना कोई चाहे तो नहीं हो सकता है। तीस चालीस सहस्र कोस तक जहां देखो तहां निपट चोखे चोखे आरे सब उतान गड़े हुए हैं। तिस स्थान में शय्या के दानी सुख से हैं जाते वो पापियों को मरण योग आन लगता है।

विसमें बहुत दूर तक चारो ओर बड़ी आग लग रही है। जो तो बावली तलाव कूप हैं खनाते वो देवतों के मन्दिर बनाते सोई विसको सहज में तर जाते हैं।

पांचवां एक सहस्र दस कोस का महा अन्धकार बन है कि जिसको कालरात्रि लोग कहते हैं, दीपदानियों को पार होता है सहज में।

छठवां वैसेही कई एक कोसों कोस तक अति अन्धकार महानिशा नाम स्थान है कि जहां बड़े बड़े बाघ, सिंह, हुण्डार, कुत्ते, बीछू, सांप वो कङ्कड़ पाथर से भरे हैं, तिस पर कांली घटा सदा छाई ही रहती है; तिस स्थान को वे पुण्यात्मा लोग क्षण में पार हो जाते हैं कि जो विधि से प्रेतों को अन्न व बिप्रों को हाथी, घोड़े, गौ, दान देते वो तीर्थों में देवता पितर को संतुष्ट करते हैं।

सातवां निपट गंभीर जल से भरा हुआ बत्तीश सहस्र कोश का कि जिसको भूमि के दानी सब सुख से तर जाते हैं।

आठवां बीस सहस्र कोश तक महा भयावन रौद्र हो रहा है कि जहां नाना प्रकार के दान से धर्म्मिष्ट लोग सहज में निकल जाते वो पापी सब हैं अटकते।

नासिकेत ऋषियों से कहते हैं—इस इस भांति से प्राणी सब मर मर के यहां से तीन लाख चौआलिस सहस्र के अन्त में जब जा पहुंचते हैं तब यमराज के द्वार पर पीप लोहू से भरी, वो सांप कीड़ों से आकुल पापी जन को महा भयावनो चार सौ कोश की वैतरणी नाम नदी आ मिलती है। जो नर काली गौ व अन्न हैं देते, गंगा सागर संगम आदि तीर्थों में नहाते, सज्जनों से संग करते, सदा दान धर्म्म में लगे रहते हैं सो तो क्षण में गौ

की पूंछ पकड़ इसको पार हो निर्मल शरीर पाय सुन्दर रथ पर चढ़ परम पद को पहुंचते हैं।

इस भांति से पुण्यात्मा लोग सुख से वो पापी सब नाना गञ्जन से जाते हैं। तैसे ही यम के दूत कि जो प्राणी जिस जोग हैं तिसको बिसी प्रकार से धर्मराज के लोक में ले जाते हैं। और जो देखा सुना है सो मैं अब कहता हूं।

सोना, रुपया औ पटम्बर बस्त्र, दूध, घी, अन्न, जल जो इहां हैं देते सो सब वहां पावते हैं। इस लिये सदा धर्म करना कि जिस से संसार में जस व परलोक में सुख होय। और विमानों पर चढ़ धर्म्मिष्ट लोग वह सुन्दर पथ से यमपथ से यमपुर में सिधारते हैं कि जहां अति निर्मल जल से भरे हुए अनेक बावली, तलाब, वो नाना भांति के फूले फले वृक्ष, खाने पीने को एक से एक बस्तु मिलती हैं। नासिकेत ऋषियों से कहते हैं, और जो अद्भुत मैंने देखा सो सुनो।

यम की सभा में कि जहां मुनियों के बीच में धर्म्मराज तारन में चन्द्रमा समान शोभते हैं, हमारे रहते ही महा तेजस्वी नारद मुनि आन पहुंचे। दूर से देखते ही वे उठ खड़े भए वो प्रणाम कर सुन्दर आसन दे बैठाय हाथ पांव धोला कुशल क्षेम पू कहने लगे "महाराज! आज हम निपट कृतार्थ हुए। और आप के आगमन से जाना कि ईश्वर मुझसे बहुत संतुष्ट हैं"।

यम की इतनी बातें सुनि क्षण एक चुप हो कर बोले "धर्म्म अधर्म्म विचारने को आप भगवान ने तुम को यहां रक्खा है। वो तीनों लोक में जितने दैत्य राक्षस मनुष्य देवता हैं सो सब तुम्हारे बश में हैं। देखने को मैं आया हूं कि किस प्रकार से प्राणियों के पुण्य पाप को विचारते हो सो हमको सुनावो।

नासिकेत कहते हैं कि इतने ही में भांति भांति के बाजन समेत, अति मनोहर सहस्र बिमान, कि जिनके साथ उत्तम उत्तम बस्त्र भूषण पहिरे, वो हाथन में छत्र चामर बीणा बेनु लिये, नाना प्रकार के गीत गाती हुई एक से एक सुन्दरी अनेक अप्सरें और सबों के आगे ऐरावत पर चढ़े इन्द्र वहां आन पहुंचे।

दूर ही से हाथी घोड़े रथ का बड़ा शब्द सुनि वो उनके दर्शन से जितने पातकी हैं सो सब नरक से छूठ स्वर्ग में चले जाते हैं।

यह समाचार पाय ऋषियों के सहित झट यमराज चम्पत हो गए। दूत सब भी मारे डर से जहां तहां उठ भागे। जब विमान आगे बढ़ गया तब ऋषियों का साथ लिये यम फिर अपनी सभा में जा बैठे।

बहुत चकित हो नारद मुनि पूछने लगे कि पराक्रम में ते देखते हैं विष्णु समान हो, और बड़े बड़े दैत्य दानव यक्ष राक्षस आगे खड़े ही हैं। निपट आश्चर्य्य मुझको लाग कि कौनसा भय हुआ कि जिससे इतना शीघ्र तुम भागे"।

नारद का बचन सुनि यम ने उत्तर दिया, "महाराज! है ते यह निपट गोप्य पर मैं तुम से कहूंगा"।

नारद मुनि वो धर्म्मराज की ऐसी बात चीत होती ही है कि दूत सब सभा में आन पहुंचे के हाथ जोर यम से कहने लगे "धर्म्मावतार! अब कौन काम करने को हमें आज्ञा होती है सो कहिए"।

इतना बचन सुनि उनने उनसे कहा कि "दया धर्म्म त्याग जो अधम जिस जिस पाप में सदा गड़े रहते हैं तिनको वैसेही दुःख दे सङ्कट में जा डाले"।

प्रभु की आज्ञा पाय महा क्रुद्ध हो दूत सब खङ्ग बरछा, मुगरे, लाठी आदि नाना शस्त्रों से जो पातकी जिस जोग थे तिनको वैसे ही मारने पीटने लगे, वो घसीट घसीट अति दुःखदायक बाघ सिंह हुंडार, कुत्ते कि जिनके निपट डरावन दांत हैं, वो बीछू कीड़ों से जहां देखो तहां भरी हुई वैतरणी में लगे डालने कि जहां पीप लोहू के महा भयावन भौंरे घूम रहे हैं।

इस प्रकार जो नर गै, ब्राह्मण, माता, पिता, गुरु का बध वो विश्वासघात करैं, वो स्वामी मित्र से बिरोध करते, जात पांत से निकल अच्छा बेष बना झूठ ही ज्ञान भाषते फिरते वो पतिव्रता स्त्री को त्यागते, रुक्ष हो सबसे बोलते हैं, सो नर बहुत दिन तक

बैतरणी में कि जहां क्षण भर भी कोई किसीकी रक्षा करने नहीं सकता डाले जाते हैं।

नासिकेत कहते हैं कि ऐसी आज्ञा कर यमराज जब सुचित भए तब नारद मुनि ने फिर उनसे पूछा कि किस कारण से तुम इहां से भाग गए सो मुझसे कहो।

धर्म्मराज बोले "आगे त्रेता युग में योग तप में मगन, सदा अश्वमेध यज्ञ करने वाले, क्रोध लोभ इन्द्रियें‌ा को जोते हुए, फुलवारी को माली सा प्रजा के पालनिहार ऐसा प्रतापी राजा जनक था कि जिसको आपसे आप अपना अपना गुण औषधी सब बताती थीं, उसके राज्य में अमृत समान स्वाद फल वृक्ष फलते, बहुत दूध गौ देतीं, ढेर दिन तक लोग जीते थे, वो कदही किसी को कुछ रोग व्याधि चिन्ता नहीं होती, तिसकी महा पतिव्रता व तपस्विनी सब गुण भरी सत्यवती नाम स्त्री कि जिसको इन्द्र आदि देवता सब आगे से ल्याने को आए थे, अप्सरों के साथ विमान पर चढ़ अमरावती को गई है, उसीको देख कर हम इहां से भागे, क्योंकि जो इन्द्रियों को जीतते हैं, वो गुरु गोविन्द की भक्ति करते, अतिथि अभ्यागत को पूजते, तिनको दण्ड देने के हमबली नहीं। और भी उनके तेज से डरते हैं। यही हमारे भागने का कारण है।

वैशम्पायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं कि चित्रगुप्त सहित यमलोक का यह समाचार नासिकेत जब कह चुके तब ऋषिलोग सुनके बहुत चकित भए, वो बार बार प्रणाम स्तुति कर उनसे बिदा हो अपने अपने आश्रम पर जा परलोक में सुख पाने को और भी तप से अधिक जप पूजा ध्यान में लगे।

इति श्री नासिकेतोपाख्यानम् समाप्तम्